هـنـدي

हमारे अक़ीदे

إعتقادنا

लेखक

आयतुल्लाह नासिर मकारिम शीराज़ी

بسم اللہ الرحمن الرحیم

हमारे अक़ीदे

(संक्षेप में शीआ धर्म विश्वास)

लेखक

आयतुल्लाह शैख़

नासिर मकारिम शीराज़ी

अनुवादक

मु० र० आबिद





नाम किताब : **हमारे अक़ीदे**

(संक्षेप में शीआ धर्म विश्वास)

लेखक : आयतुल्लाह नासिर मकारिम शीराज़ी

अनुवादक : मु0 र0 आबिद

पहला एडिशन : जनवरी 2007

प्रकाशक : अलमुअम्मल कल्चरल फाउण्डेशन लखनऊ

मुद्रक : निज़ामी प्रेस, लखनऊ

कमपोज़िंग : आइडियल कम्प्युटर्स प्वाइंट, चौक, लखनऊ

मुद्रित प्रतियाँ : 1000

क़ीमत : 40 रुपये

मिलने के पते:

1- 'नूरे हिदायत फाउण्डेशन', इमामबाड़ा गुफ़रानमाब चौक, लखनऊ-3

2- निज़ामी प्रेस बुक डिपो, विक्टोरिया स्ट्रीट, लखनऊ-3

3- मासिक 'इस्लाह' मस्जिद दीवान नासिर अली खाँ, मुर्तज़ा हुसैन रोड, चौक, लखनऊ-3



विषय सूची

तीसरा चैप्टर: क़ुर्आन और आसमानी किताबें

चौथा चैप्टर: क़यामत, मौत के बाद दूसरी ज़िन्दगी

प्रकाशक की बात

किसी ने कहा है:

Islam is the most misunderstood religion.

(इस्लाम सबसे ज़्यादा ग़लत समझा हुआ मज़हब है।)

यह बात एक हद तक तो सही है लेकिन ज़्यादा सही यही है कि इस्लाम सबसे ज़्यादा ग़लत समझाया गया धर्म है। इस ग़लत समझ के पीछे पराया हाथ हो तो हो, पर इसमें कुछ अपनी भी कमी हो सकती है। हम मुसलमान शायद अपने कहने-करने और चाल-चलन से इस्लाम को सही तरह बता न पाये। यह भी हो सकता है कि कहीं हम ख़ुद ही सही इस्लाम को समझ न पाये हों।

कुछ इसी सोच से अल-मुअम्मल कल्चरल फाउन्डेशन यह पुस्तिका 'हमारे अक़ीदे' सामने ला रहा है। यह इस्लाम जगत के बड़े भरोसे वाले, जाने-माने मुजतहिद लेखक आयतुल्लाह नासिर मकारिम शीराज़ी (म0 ज़ि0) की मूल फ़ारसी किताब का हिन्दी अनुवाद है। इसका हिन्दी रूप जनाब रिज़ा आबिद साहब (मु0 र0 आबिद) ज़ैदपूरी का दिया हुआ है।

शीराज़ी साहब महान विद्वान, धर्मगुरु और मरजा' (वह जिसकी मज़हबी सूझबूझ पर विश्वास कर उसके फ़तवों/मसलों पर चला जाए) है। ईरान के शहर शीराज़ में 1345 हि0 (1926-27) में जन्मे और वहीं इस्लाम शिक्षा पाकर उच्च शिक्षा के लिए वह हौज़-ए-इल्मिया, क़ुम, गये जहाँ अपने समय के महान विद्वान आक़ाए बुरुजर्दी के दर्से ख़ारिज (उच्च शिक्षा व शास्त्रीय-शोध का Seminary आश्रम की तरह का पठन-पाठन) में शरीक हुए। फिर 1396 हि0 (1976-77 ई0) में नजफ़, इराक़ के पुनीत शहर नजफ़ के हौज़-ए-इल्मिया (शीओं का सबसे पुराना प्रतिष्ठित मशहूर निकेतन)

चले गये। वहाँ के बड़े–बड़े विद्वान मुजतहिदों जैसे आक़ाए मुहसिन अल–हकीम (ता० स०) और आक़ाए ख़ूई (ता० स०) के दर्स ख़ारिज में शरीक हुए और एक बड़े मुजतहिद के रूप में अपनी पहचान बनाई। 1991 ई० में शीराज़ वापस आकर ख़ुद अपना दर्स ख़ारिज शुरु किया। वहीं कई मदरसों की स्थापना भी की। वह इस्लामी फ़िक़्ह (धर्म–विधि शास्त्र) के बड़े विद्वान हैं और इस्लामी विषयों पर बहुत सी किताबों के लेखक भी हैं। इस्लामी अक़ीदे पर पिछले पचास साल से काम कर रहे हैं। इस तरह वह अक़ीदे के विशेषज्ञ मशहूर हैं। इस्लामी शास्त्रों पर उनकी कई रचनाएँ और संकलन हैं। कुछ नाम ये हैं: 'अनवारुल उसूल' (इस्लामी विधि–सिधान्त पर) 'तफसीरे नमूना' (क़ुर्आन की तफ़सीरद्‌ इसके उर्दू और गुजराती में अनुवाद भी छप चुके हैं), 'तौज़ीहुल मसाएल' (मसलों/फ़तवों का संग्रह), तक़ैया, उसूले अक़ाएद (अक़ीदे/धर्म विश्वास पर)।

उनकी किताबें हाथों हाथ ली जाती हैं और मान सम्मान से देखी जाती हैं।

अपनी इस पुस्तिका में उन्होंने इस्लाम धर्म के विश्वासों का निचोड़ बड़ी आसान ज़बान में प्रस्तुत किया है। अनुवाद में भी कोशिश की गयी है कि ज़बान सहल रहे, कठिन शब्दों से बोझल न होने पाये।

आशा है हिन्दी जानने वाले इस पुस्तिका को हाथों हाथ लेंगे, ख़ुद फायदा उठाएँगे और सवाब पाएँगे और हमारा दिल बढ़ाएंगे कि हमें और धर्म सेवा करने का मौक़ा मिले।

'अलमुअम्मल कल्चरल फाउन्डेशन'
एराज़ लखनऊ मेडिकल कालेज के पास
सरफ़राज़गंज, लखनऊ
10 ज़िलहिज्ज 1427–1 जनवरी 2007



بسم اللہ الرحمٰن الرحیم

इस किताब के लिखने का मक़सद और इसका पैग़ाम

1– हम इस ज़माने में एक बहुत बड़ा बदलाव देख रहे हैं। इस बदलाव का सोता आसमानी मज़हबों में से एक अज़ीम मज़हब, इस्लाम है।

हमारे ज़माने में इस्लाम ने एक नई ज़िन्दगी पायी है। दुनिया के मुसलमान जाग चुके हैं और अपने असली ठिकाने की तरफ़ लौट रहे हैं। उनकी वे मुश्किलें जिनका हल उन्हें कहीं और नहीं मिला वे उन्हें इस्लामी तालीमों और उसके उसूल (सिद्धान्त) व फ़ुरुअ् (कर्मों) में ढून्ड रहे हैं।

इस बदलाव की वजह क्या है? यह एक अलग मुद्दा है। जो चीज़ यहाँ अहमियत वाली है वह उस बात की जानकारी होना है कि इस बड़े बदलाव के असर सभी इस्लामी मुल्कों बल्कि ग़ैर इस्लामी मुल्कों में भी नज़र आ रहे हैं। इसलिए दुनिया के बहुत से लोग यह जानना चाहते हैं कि इस्लाम क्या कहता है और दुनिया के लोगों के लिए उसके पास कौन सा नया पैग़ाम है।

ऐसे में हमारी ज़िम्मेदारी यह है कि इस्लाम की पहचान इस तरह से कराएँ जिस तरह वह है और उसमें अपनी तरफ़ से किसी चीज़ की बढ़ोत्तरी न करें। यह पहचान साफ़ और आम समझ वाले अन्दाज़ में होना चाहिए। हमें चाहिए कि

इस्लाम और इस्लामी मस्लकों (मतों) की जानकारी की जो कड़वाहट लोगों के अन्दर पायी जाती है उसे हक़ीक़त ज़ाहिर करके दूर करें और इस बात की इजाज़त न दें कि हमारी जगह दूसरे बोलें और हमारी जगह वे फ़ैसला करें।

2- इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि दूसरे मज़हबों की तरह इस्लाम में भी अलग-अलग फ़िरक़े (टुकड़ियाँ) पाए जाते हैं जिनमें से हर एक नज़रियाती और अमली मसलों में अलग-अलग ख़ूबियों वाले हैं, लेकिन ये अलगाव इस हद तक हरगिज़ नहीं हैं कि वह इस मज़हब के मानने वालों के बीच आपसी भाईचारे और मदद के रास्ते में रुकावट बनें, बल्कि वह अपनी मदद और भाईचारे के ज़रिए पूरब और पश्चिम से उठते हुए तूफ़ानों के मुक़ाबले में अपने वजूद की हिफ़ाज़त कर सकते हैं, और अपने एक हुए दुश्मन की साज़िशों को रोक सकते हैं ।

मन के इन ख़यालों को वजूद में लाने, इनको ताक़त देने, और इनकी बुनियादें मज़बूत करने के लिए यक़ीनी तौर पर कुछ उसूलों और क़ाएदों की पाबन्दी ज़रूरी है, जिनमें सबसे अहम यह है कि इस्लामी फ़िरक़े एक दूसरे को अच्छी तरह समझें, ताकि हर एक की अच्छाइयाँ दूसरो के सामने आ सकें, क्योंकि एक दूसरे को अच्छी तरह पहचान कर ही बुरी सोच का दरवाज़ा बन्द किया जा सकता है और मदद के रास्ते को बराबर किया जा सकता है।

एक दूसरे को पहचानने का सबसे अच्छा ज़रिया यह है कि हर मसलक में इस्लाम के उसूल व फ़ुरूअ् के बारे में ख़यालों, उस फ़िरक़े के नामी और बड़े उलमा से लिये जाएँ, क्योंकि अगर इस सिलसिले में न जानने वाले लोगों से राब्ता

किया जाए या एक फ़िरक़े के अक़ीदे उसके दुश्मनों से पूछे जाएँ तो ज़ाती पसन्द और नापसन्द मक़सद तक पहुँचने के रास्ते को बन्द कर देगी और आपसी समझदारी अलगाव और बे एतेमादी में बदल जाएगी।

3– इन दोनों बातों को सामने रखते हुए हमने यह इरादा किया कि उसूल व फ़ुरूअ् में इस्लामी अक़ीदों का तज़किरा शीआ मज़हब की ख़ूबियों के साथ इस छोटी सी किताब में करें और एक ऐसी किताब सामने लाएँ जो नीचे दी गयी ख़ूबियों वाली होः–

(1) इसमें सभी ज़रूरी मक़सद का निचोड़ बयान किया जाए और समझ रखने वाले पाठकों के कन्धों से कई किताबों के पढ़ने का बोझ कम कर दें।

(2) मतलब साफ हों और उनमें कुछ ढका छुपा हुआ न हो। यहाँ तक कि उन मुहावरों के इस्तेमाल से भी बचा जाए जो सिर्फ इल्मी माहोल या दीनी तालीम के मरकज़ों में इस्तेमाल होते हों। साथ–साथ इस बात का भी ख़याल रखा जाए कि यह काम बेकार बहसों को जन्म देने वाला न बने।

(3) यहाँ हमारा मक़सद अक़ीदों का बयान करना है, उनकी दलीलें बयान करना नहीं, लेकिन कुछ जगहों पर इस छोटी सी तहरीर के अन्दाज़ को सामने रखते हुए बहस को किताब (कुर्आन मजीद), सुन्नत (रसूल स0 का आचरण) और अक़्ली दलीलों से सजाया गया हो।

(4) हर तरह की लीपा–पोती और पहले से किये गए फ़ैसले से ख़ाली हो ताकि हक़ीक़तें उसी तरह बयान हों जिस तरह हैं।

(5) सभी फ़िरक़ों के एहतेराम के सिलसिले में हर बहस में

क़लम की पाकी और कोरापन का ख़याल रखा जाए।

यह किताब ऊपर दी गयी बातों को सामने रखते हुए बैतुल्लाह (काबे) के सफ़र में (जब रूह और दिल पाकी से भरे हुए होते हैं।) लिखी गयी है। इसके बाद कई बैठकों में कुछ उलमा के साथ इस पर बहस और तहक़ीक़ (शोध) की गयी है। इस तरह यह किताब पूरी की गई। हम उम्मीद बनाये हुए हैं कि ऊपर जिन मक़सदों को पाने में यह किताब काम की होगी और आख़िरत के लिए यह एक पूँजी होगी। हम ख़ुदा के सामने हाथ फैलाकर दुआ करते हैं:–

”رَبَّنَآ اِنَّنَا سَمِعْنَا مُنَادِيًا يُّنَادِىْ لِلْاِيْمَانِ اَنْ اٰمِنُوْا بِرَبِّكُمْ فَاٰمَنَّا
رَبَّنَا فَاغْفِرْلَنَا ذُنُوْبَنَا وَكَفِّرْ عَنَّا سَيِّاٰتِنَا وَتَوَفَّنَا مَعَ الْاَبْرَارِ“

[ऐ हमारे पालने वाले! हमने एक पुकारने वाले (रसूल स0) की आवाज़ सुनी जो ईमान के वासते यूँ पुकारता था कि अपने पालने वाले पर ईमान लाओ (उसे मानो) तो हमने मान लिया, ऐ हमारे पालने वाले हमारे गुनाहों को माफ़ कर दे और हमारी बुराइयों को हमसे दूर कर दे और हमें अच्छाइयों नेकियों के साथ उठा ले।]

(सूरा 'आले इमरान' आयत 193)

नासिर मकारिम शीराज़ी
मदरसा अलइमाम अमीरुलमोमिनीन, कुम
मुहर्रम 1417 हि0 (1996 ई0)

पहला चैप्टर

पहला चैप्टर

ख़ुदा की पहचान और तौहीद

1– क़ादिरे मुत्आल (सर्वशक्तिमान) का वजूद

हमारा अक़ीदा (मानना) है कि: ख़ुदा पूरी काएनात का पैदा करने वाला है उसकी बड़ाई, इल्म, ज्ञान और क़ुदरत की निशानियाँ काएनात की मौजूद हर चीज़ में साफ नज़र आती हैं। यह निशानियाँ हमारे वजूद में, जानदारों और पेड़–पौधों की दुनिया में, आसमान के सितारों में, ऊपर वाली दुनिया में, बस हर जगह सामने हैं।

हमारा अक़ीदा है कि: दुनिया की मौजूद चीज़ों में हम जितना ग़ौर–फ़िक्र से काम लें उसी हिसाब से उस पाक ज़ात की बड़ाई, उसके इल्म ज्ञान और क़ुदरत की ताक़त जानते जाएँगे। इल्म व समझ की तरक़्क़ी की बदौलत दिन बदिन उसके इल्म और हिकमत के नये–नये दरवाज़े हम पर खुलते जाते हैं। यह हमारी सोच को नयी दिशा दिखाते हैं। यह सोच उस सच्ची ज़ात से हमारे बेहद प्यार का सोता साबित होगी और पल–पल उस पाक ज़ात से हमारे क़रीब होने की वजह और उसके नूर, जलाल व ख़ूबसूरती में हमें डूब जाने की वजह बनती है।

क़ुर्आने करीम में इरशाद होता है कि:–

"وَفِى الْاَرْضِ آيَاتٌ لِلْمُوْقِنِيْنَ وَفِىْ اَنْفُسِكُمْ اَفَلَا تُبْصِرُوْنَ."

[यक़ीन के तलाश करने वाले लोगों के लिए ज़मीन में निशानियाँ हैं और ख़ुद तुम्हारे वजूद में (भी निशानियाँ)। क्या तुम

देखते नहीं हो?] (सूरा 'ज़ारियात' आयत: 20-21)

एक और जगह इरशाद होता है कि:

"اِنَّ فِی خَلْقِ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَاخْتِلَافِ اللَّیْلِ وَالنَّهَارِ لَاٰیٰاتٍ لِّاُوْلِی الْاَلْبَابِ. اَلَّذِیْنَ یَذْکُرُوْنَ اللّٰهَ قِیَاماً وَّقُعُوْداً وَّعَلٰی جُنُوْبِهِمْ وَیَتَفَکَّرُوْنَ فِی خَلْقِ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ. رَبَّنَا مَاخَلَقْتَ هٰذَا بَاطِلاً."

[बेशक आसमानों और ज़मीन की पैदाईश में और दिन रात के आने जाने में अक़ल वालों के लिए (खुली हुई) निशानियाँ हैं, उन लोगों के लिए जो ख़ुदा को खड़े, बैठे हुए और पहलू के बल लेटे हुए (करवट-करवट) याद करते हैं। और आसमानों और ज़मीन की पैदाईश के राज़ों में ग़ौर व फ़िक्र करते हैं (और कहते हैं) ऐ हमारे पालने वाले! तूने इन्हें हरगिज़ बेकार नहीं पैदा किया है।]

(सूरा 'आले इमरान', आयत: 190-191)

2- उसकी जमाली और जलाली (सौन्दर्य व तेज वाली) ख़ूबियाँ

हमारा अक़ीदा है कि: खुदा की ज़ात पाक, हर बुराई और कमी से पाक और सभी कमालों से भरी हुई है। बल्कि वह तो मुकम्मल ज़ात है। इन लफ़्ज़ों में "इस दुनिया मैं मौजूद हर चीज़ के मुकम्मल होने की वजह उसी की पाक ज़ात है।"

क़ुर्आने करीम में इरशाद होता है:

هُوَاللّٰهُ الَّذِیْ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ اَلْمَلِکُ الْقُدُّوْسُ السَّلَامُ الْمُؤْمِنُ الْمُهَیْمِنُ الْعَزِیْزُ الْجَبَّارُ الْمُتَکَبِّرُ، سُبْحَانَ اللّٰهِ عَمَّا یُشْرِکُوْنَ. هُوَاللّٰهُ

الْخَالِقُ الْبَارِئُ الْمُصَوِّرُ لَهُ الْاَسْمَآ الْحُسْنٰى، يُسَبِّحُ لَهُ مَافِى السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ، وَهُوَالْعَزِيْزُ الْحَكِيْمُ."

[अल्लाह वह है जिसके सिवा कोई ख़ुदा नहीं है। प्रभु और असली मालिक वही है। वह बुराई और कमी से पाक है। किसी पर जुल्म नहीं करता, पनाह देने वाला है, सब चीज़ों की निगरानी करने वाला है और उसे कोई हरा नहीं सकता जो अपने पक्के इरादे के ज़रिए हर मामले को सुधारता है। वह बड़ाई के लायक़ है और वह पाक है उन चीज़ों से जिनको लोग उसका साझी बताते हैं। वह ऐसा ख़ुदा है जो पैदा करने वाला है और ऐसा बनाने वाला है जिसकी मिसाल नहीं मिलती। और वह सूरतों का बनाने वाला है। उसके अच्छे-अच्छे नाम हैं। (और हर तरह की मुकम्मल ख़ूबियाँ) आसमानों और ज़मीन में मौजूद हर चीज़ उसकी तारीफ़ करती है और वह ज़बरदस्त समझ वाला है।] (सूरा 'हश्र' आयत: 23-24)

यह थीं उसकी कुछ जमाली व जलाली ख़ूबियाँ।

3- उसकी पाक ज़ात ला-मुतनाही (अनन्त/असीम) है

हमारा अक़ीदा है कि: उसकी ज़ात हर तरह से ला महदूद (किसी चीज़ में न सिमटने वाली, न घिरने वाली) है, चाहे इल्म व कुदरत के लेहाज़ से हो या हमेशा से होने और आगे हमेशा रहने के लेहाज़ से। इसी लिए वक़्त और जगह उसको घेर नहीं सकते, क्योंकि वक़्त और जगह चाहे जैसे भी हो हर हाल में घिरे हुए हैं, लेकिन इसके बाद भी वह हर जगह और हर वक़्त में पाया जाता है, क्योंकि वह वक़्त और जगह से परे और बहुत आगे है।

इरशाद होता है कि:

”وَهُوَ الَّذِیْ فِی السَّمَاءِ اِلٰہٌ وَفِی الْاَرْضِ اِلٰہٌ وَهُوَ الْحَکِیْمُ الْعَلِیْمُ“

[वह ऐसी ज़ात है जो आसमान में भी इबादत के लायक़ खुदा है और ज़मीन में भी और वह समझने वाला और जानने वाला है।]

(सूरा 'ज़ुख़रुफ़' आयत: 84)

एक और जगह इरशाद होता है कि:

”وَهُوَ مَعَکُمْ اَیْنَمَا کُنْتُمْ وَاللّٰہُ بِمَا تَعْمَلُوْنَ بَصِیْرٌ“

[वह तुम्हारे साथ है चाहे तुम जहाँ भी हो और जो कुछ तुम करते हो खुदा उसकी ख़बर रखता है।]

(सूरा 'हदीद' आयत 4)

हाँ! वह हम से ज़्यादा हमारे क़रीब है और हमारी रूह के अन्दर है। वह हर जगह है। इसके बाद भी उसे जगह की ज़रूरत नहीं है।

”وَنَحْنُ اَقْرَبُ اِلَیْهِ مِنْ حَبْلِ الْوَرِیْدِ.“

[हम उस (इंसान) की गर्दन की नस से भी ज़्यादा क़रीब हैं।]

(सूरा क़ाफ़ आयत 16)

और इरशाद होता है कि:

”هُوَ الْاَوَّلُ وَالْاٰخِرُ وَالظَّاهِرُ وَالْبَاطِنُ وَهُوَ بِکُلِّ شَیْءٍ عَلِیْمٌ.“

[यानि वह पहला है, वह आख़िर है, वह ज़ाहिर है, व बातिन (भीतर वाला) है और वह हर चीज़ का जानने वाला है।]

(सूरा 'हदीद' आयत 3)

इसलिए अगर हम कुर्आन मजीद की आयतों में यह देखते हैं:

"ذُوالْعَرْشِ الْمَجِيد."

[अर्श (तख़्त) वाला और इज़्ज़त व बुज़ुर्गी वाला है।]

(सूरा 'बुरूज' आयत 15)

तो यहाँ अर्श से मुराद शाही तख़्त (राज सिंहासन) नहीं है। इसी तरह अगर हम दूसरी आयत में यह देखते हैं कि:

"الرَّحْمٰنُ عَلَى الْعَرْشِ اسْتَوٰى"

[बहुत बड़ा रहम वाला ख़ुदा अर्श पर ठहरा हुआ है।][1]

तो इसका मतलब हरगिज़ यह नहीं है कि उसके लिए कोई जगह ख़ास है। बल्कि यह माद्दी दुनिया और न समझ में आने वाली (पराभौतिक) दुनिया पर उसके राज का एलान कर रही है, क्योंकि अगर हम उसके लिए किसी ख़ास जगह को मानें तो मानों हमने उसे घेर दिया और उसे मख़्लूक़ (उसके पैदा किये हुओं) की ख़ूबियों वाला बना दिया और उसे भी दूसरी चीज़ों की तरह बना दिया, जबकि:

"لَيْسَ كَمِثْلِهٖ شَيْءٌ"

[कोई चीज़ उसकी तरह नहीं।] (सूरा 'शूरा' आयत 11)

"وَلَمْ يَكُنْ لَّهٗ كُفُوًا اَحَدٌ."

[उसका कोई बराबरी वाला और कोई साथी (वर) नहीं है।]

(सूरा 'तौहीद' आयत 4)

4- वह जिस्म नहीं है और हरगिज़ दिखाइ नहीं देता

हमारा अक़ीदा है कि: ख़ुदा हरगिज़ इन आँखों से

(1) क़ुर्आन करीम की कुछ आयतों से पता चलता है कि ख़ुदा की कुर्सी तमाम आसमानों और ज़मीन को घेरे हुए है। इस तरह उसका अर्श भी पूरी माद्दी काएनात पर छाया हुआ है।

"وَسِعَ كُرْسِيُّهُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ." (सूरा बक़रा आयत 255)

दिखाइ नहीं दे सकता, क्योंकि आँख से दिखाइ देने का मतलब यह है कि वह जिस्म रखता है, उसे जगह की ज़रूरत है, रंग व शक्ल वाला है और सिम्त (दिशा) रखता है। यह सब पैदा होने वालों के गुण हैं और बड़ा खुदा इस बात से अलग है कि उस पैदा होने वालों की ख़ूबियाँ पायी जाएँ।

इस लिए खुदा के देखने पर अक़ीदा रखना एक तरह का शिर्क है:

"لا تُدْرِكُهُ الْاَبْصَارُ وَهُوَ يُدْرِكُ الْاَبْصَارَ وَهُوَ اللَّطِيْفُ الْخَبِيْرُ."

[आँखें उसे नहीं देखतीं लेकिन वह आँखों को देखता है और वह मेहरबान व ख़बर रखने वाला है।]

(सूरा 'अन्आम' आयत-103)

इसी वजह से जब बनीइस्राईल के बहाने बनाने वाले लोगों ने हज़रत मूसा (अ0) से खुदा के देखने की माँग की और कहा:

"لَنْ نُّؤْمِنَ لَكَ حَتّٰى نَرَى اللّٰهَ جَهْرَةً."

[हम उस वक़्त तक हरगिज़ तुझ पर ईमान नहीं लाएँगे जब तक खुदा को अपनी आँखों से न देख लें।]

(सूरा 'बक़र' आयत-55)

तो हज़रत मूसा (अ0) ने उन्हें तूर पहाड़ पर ले गाऐ और उनकी माँग दोहरायी तो खुदा की तरफ़ से यह जवाब सुना:

"لَنْ تَرَانِىْ وَلٰكِنِ انْظُرْ اِلَى الْجَبَلِ فَاِنِ اسْتَقَرَّ مَكَانَهُ فَسَوْفَ تَرَانِىْ فَلَمَّا تَجَلّٰى رَبُّهُ لِلْجَبَلِ جَعَلَهُ دَكًّا وَّخَرَّ مُوْسٰى صَعِقًا فَلَمَّآ اَفَاقَ



قَالَ سُبْحَانَکَ تُبْتُ اِلَیْکَ وَاَنَا اَوَّلُ الْمُؤْمِنِیْنَ۔"

[मुझे तुम हरगिज़ नहीं देख सकते मगर पहाड़ की तरफ देख अगर वह अपनी जगह पर ठहरा रहे तो मुझे देख सकोगे। फिर जब तेरे पालने वाले ने पहाड़ पर तजल्ली (ज्योति) उतारी की तो उसे रेज़ा-रेज़ा कर दिया। मूसा (अ0) बेहोश होकर ज़मीन पर गिर पड़े। जब उन्हें होश आया तो अर्ज़ की: ऐ मेरे ख़ुदा तू इससे पाक है कि आँख से देखा जा सके। तेरे सामने तौबा करता हूँ और मोमिनों (मानने वालों) में मैं पहला मोमिन हूँ।] (सूरा 'अअ्राफ़' आयत-143)

इस वाक़ेअे से साबित हो गया कि ख़ुदा हरगिज़ दिखाई नहीं दे सकता।

हमारा अक़ीदा है कि: अगर कुछ आयतों और रिवायतों में ख़ुदा के देखने की बात आई है तो इस से मुराद दिल और अन्दुरूनी आँखों से उसको देखना है, क्योंकि क़ुर्आनी आयतें हमेशा एक दूसरी की तफ़सीर करती हैं।

"اَلْقُرْآنُ یُفَسِّرُ بَعْضُہٗ بَعْضًا"(1)

इसके अलावा हज़रत अली (अ0) ने उस शख़्स के सवाल के जवाब में जिसने आपसे यह पूछा था:

"یَا اَمِیْرَ الْمُؤْمِنِیْنَ هَلْ رَاَیْتَ رَبَّکَ؟"

[ऐ अमीरुलमोमिनीन क्या आपने कभी अपने ख़ुदा को देखा है?]

---

(1) यह बड़ा मशहूर जुमला है और इब्ने अब्बास से रिवायत है लेकिन यही बात नहजुलबलागः में अमीरुलमोमिनीन हज़रत अली अलैहिस्सलाम से एक और अन्दाज़ में इस तरह कही गई है:

"اِنَّ الْکِتَابَ یُصَدِّقُ بَعْضُہٗ بَعْضاً...." (नहजुलबलागा ख़ुतबा 18)

और एक जगह इरशाद फरमाते हैं कि

"وَیَنْطِقُ بَعْضُہٗ بِبَعْضٍ وَیَشْهَدُ بَعْضُہٗ عَلٰی بَعْضٍ۔" (ख़ुतबा 103)

फ़रमाया:

"اَ اَعْبُدُ مَا لَا اَرٰی؟!"

[**क्या मैं किसी अनदेखे की इबादत करूँ?**]

इसके बाद हज़रत (अ0) ने फरमाया:

"لَا تُدْرِكُهُ الْعُيُونُ بِمُشَاهَدَةِ الْعِيَانِ وَلٰكِنْ تُدْرِكُهُ الْقُلُوبُ بِحَقَائِقِ الْإِيمَانِ."

[**आँखें उसे हरगिज़ नहीं देख सकतीं लेकिन दिल ईमान की ताक़त से उसका नज़ारा कर सकते हैं।**] (नहजुल बलागा खुतबा 179)

हमारा अक़ीदा है कि खुदा के लिए पैदा होने वालों की ख़ूबियों का क़ाएल होना खुदा की पहचान से दूरी और शिर्क में पड़ जाने की वजह है जैसे उसके बारे में सिम्त (दिशा), जिस्म, सामने आने और दिखाई देने का अक़ीदा रखना। जी हाँ! वह सभी मिटने वालों की बातों और उनकी ख़ूबियों से ऊपर है और कोई चीज़ उस जैसी नहीं।

5– सभी इस्लामी तालीमों की अस्ल तौहीद है

हमारा अक़ीदा है कि: खुदावन्दे आलम की पहचान से जुड़े बहुत अहम मुद्दों में से एक तौहीद यानी खुदा के एक होने की पहचान की बात है। हक़ीक़त में तौहीद सिर्फ उसूल दीन के एक हिस्से का नाम ही नहीं बल्कि सभी इस्लामी अक़ीदों की रूह और जान है। यह बात बिलकुल साफ लफ़्ज़ों में कही जा सकती है कि इस्लाम के उसूल और फुरूअ् तौहीद के अक़ीदे से मिलकर बनते हैं। हर जगह पर तौहीद ही नज़र आती है। मिसाल के तौर पर तौहीदे ज़ात (खुदा जान में एक

है), तौहीदे सिफ़ात (खुदा गुणों से एक है), तौहीद अफ़आल (खुदा कामों में एक है), और दूसरे लफ़्ज़ों में नबियों का सच्चा पैग़ाम, आसमानी दीन, मुसलमानों का क़िब्ला, क़ुर्आन और खुदा के दुनिया के घेरे क़ानून और हुक्मों की एकता और मुसलमानों की एकता और क़यामत के अक़ीदे की एकता।

इसी वजह से क़ुर्आन ने तौहीद के अक़ीदे से किसी तरह की दूरी और शिर्क की तरफ़ झुकने को न माफ़ होने के क़ाबिल ठहराया।

"اِنَّ اللّٰهَ لَا يَغْفِرُ اَنْ يُّشْرَكَ بِهٖ وَيَغْفِرُ مَا دُوْنَ ذٰلِكَ لِمَنْ يَّشَآءُ وَمَنْ يُّشْرِكْ بِاللّٰهِ فَقَدِ افْتَرٰٓى اِثْمًا عَظِيْمًا."

[खुदा (हरगिज़) शिर्क की माफ़ी नहीं देगा और उससे कम जिस चीज़ को भी चाहे (और लायक़ समझे) माफ़ कर देगा। जो किसी को खुदा का शरीक (साझी) ठहराए, वह बहुत बड़ा गुनाह करने वाला हुआ है।] (सूरा 'निसा' आयत 48)

"وَلَقَدْ اُوْحِيَ اِلَيْكَ وَاِلَى الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِكَ لَئِنْ اَشْرَكْتَ لَيَحْبَطَنَّ عَمَلُكَ وَلَتَكُوْنَنَّ مِنَ الْخَاسِرِيْنَ."

[ऐ रसूल! आप और आपसे पहले सभी नबियों की तरफ़ यह वही हुई है कि अगर शिर्क को चुनोगे तो तुम्हारे काम बर्बाद हो जाएँगे और तुम घाटा उठाने वालों में से हो जाओगे।] (सूरा 'जुमर' आयत 65)

6– तौहीद की क़िस्में

हमारा अक़ीदा है कि: तौहीद की कई क़िस्में हैं जिनमें से नीचे दी गयी चार क़िस्में बहुत ही अहम हैं।

(क) तौहीदे ज़ात (आस्तित्व की एकता)

यानी उसकी ज़ात एक अकेली है। कोई उस जैसा

और उसकी तरह कोई भी नहीं है।

(ख) तौहीदे सिफ़ात (गुणों की एकता)

यानि इल्म, क़ुदरत, अज़लियत (अनादि होना), अबदियत (अनन्त होना) और दूसरी ख़ूबियाँ उसकी ज़ात में जमा हैं और ख़ूबियाँ उसकी ऐने ज़ात हैं। यानि उसके गुण उसके अस्तित्व से अलग नहीं है। वह पैदा होने वालों की तरह नहीं जिनके गुण आपस में एक दूसरे से अलग होते हैं और उनकी ज़ात से भी अलग होते हैं। मगर ख़ुदा की ज़ात और ख़ूबियों के बीच एका के बारे में बहुत ग़ौर फ़िक्र और गहरी सोच की ज़रूरत है।

(ग) तौहीदे अफ़आल (कामों की एकता)

यानि इस होने व मिटने वाली दुनिया में जो भी काम, हरकत (गति) या असर मौजूद है उनका सोता ख़ुदा का इरादा और उसका चाहना है।

"اَللّٰهُ خَالِقُ كُلِّ شَيْءٍ وَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ وَكِيْلٌ."

[**ज़मीन और आसमान की चाबियाँ उसके लिए हैं (और उसकी क़ुदरत के क़ब्ज़े में हैं।**] (सूरा 'शूरा' आयत 12)

जी हाँ!

"لَا مُؤَثِّرَ فِي الْوُجُوْدِ اِلَّا اللّٰهُ"

[**दुनिया में उस पाक ज़ात के सिवा कोई सच्ची वजह नहीं है।**]

लेकिन इस बात का यह मतलब नहीं है कि हम अपने कामों में मजबूर हैं, बल्कि इसके उलटे हम इरादा करने और फ़ैसला करने में आज़ाद हैं।

"اِنَّا هَدَيْنَاهُ السَّبِيْلَ اِمَّا شَاكِرًا وَّاِمَّا كَفُوْرًا."

[हमने उसे हिदायत का रास्ता बता दिया चाहे वह शुक्र करने वाला बने (और क़बूल करे) या नाशुक्री करे (और इन्कार कर दे।]

(सूरा 'इंसान' आयत 3)

"وَاَنْ لَّيْسَ لِلْاِنْسَانِ اِلَّا مَاسَعٰى."

[इंसान को उसकी कोशिश और मेहनत का नतीजा ही मिलता है।] (सूरा 'नज्म' आयत 39)

यह कुर्आनी आयतें बिलकुल खुले अन्दाज़ में बताती हैं कि इंसान अपने इरादों में आज़ाद है। लेकिन चूँकि इरादे की यह आज़ादी और काम कर सकने की ताक़त हमें खुदा ने दी है, इसलिए हमारे कामों की निस्बत उसकी तरफ दी जाती है, लेकिन यह मामला इस बात को नकारता नहीं कि हमें अपने कामों का जवाब देना होगा।

उसने यह इरादा किया कि हम अपने काम आज़ादी से पूरा करें ताकि इस तरह से वह हमारा इम्तिहान ले और कमाल के रास्ते पर हमें चला दे, क्योंकि इन्सानी कमाल इरादे की आज़ादी और खुदा के कहे पर चलने का रास्ता वह अपनी मर्ज़ी से तैय करने में छुपा है। इख़्तियार के बिना ज़बरदस्ती काम में न तो कोई अच्छाई है और न बुराई।

अगर हम अपने कामों में मजबूर होते तो उसूल से नबियों के भेजे जाने और आसमानी किताबों के उतरने का कोई मतलब न रहता और न ही दीनी फ़रीज़े और तालीम व तरबियत (शिक्षा–प्रशिक्षण) का कोई मतलब बनता। फिर सवाब और अज़ाब भी बे माने हो जाते।

यह वही अक़ीदा है जो हमने अहलेबैत के इमामों (अ0) से सीखा है। उन्होंने फरमाया है कि न बिलकुल मजबूरी से



सही है और न आज़ादी बल्कि इन दोनों के बीच की बात ही ठीक है।

"لَا جَبرَ وَلَا تَفوِيضَ وَلٰكِنْ اَمْرٌ بَيْنَ اَمْرَيْنِ."

(उसूले काफी भाग 1 पे0 160 बाब 'अलजब्र वल क़द्र वलअम्र बैनलअम्रैन')

(घ) तौहीदे इबादतः

यानि इबादत ख़ुदा के साथ ख़ास है और उसकी पाक ज़ात के अलावा कोई इबादत के लायक़ नहीं है। तौहीद की यह क़िस्म उसकी सभी क़िस्मों में अहम है। अल्लाह के नबी भी इसी की ताकीद करते रहे हैं।

"وَمَآ اُمِرُوْٓا اِلَّا لِيَعْبُدُوا اللّٰهَ مُخْلِصِيْنَ لَهُ الدِّيْنَ حُنَفَآءَ ....
وَذٰلِكَ دِيْنُ الْقَيِّمَةِ."

[उन्हें (नबियों को) इसके सिवा कोई हुक्म नहीं दिया गया कि सिर्फ ख़ुदा की इबादत करें और उसके लिए अपना दीन खरा करें और तौहीद में शिर्क से बचें.......यह है ख़ुदा का रहने वाला क़ानून।]

(सूरा 'बैय्यिना' आयत 5)

चाल-चलन और ख़ुदा की पहचान के पूरे दरजे पाने के लिए तौहीद की गहराइयाँ इससे भी ज़्यादा हो जाती हैं और वह इस दरजे तक पहुँच जाती है कि इंसान सिर्फ ख़ुदा से दिल लगाए, हर जगह उसी की चाहत रहे, उसके सिवा कुछ न देखे और कोई भी चीज़ उसका ध्यान ख़ुदा की तरफ से हटाकर अपनी तरफ न कर ले।

"كُلَّمَا شَغَلَكَ عَنِ اللّٰهِ فَهُوَ صَنَمُكَ."

[जो चीज़ तेरा ध्यान अपनी तरफ लगाए रखे और तुझे ख़ुदा से दूर कर दे वह तेरा बुत है।]

हमारा अक़ीदा है कि: तौहीद सिर्फ इन चार क़िस्मों में ही नहीं है बल्कि तौहीदे मालिकियत[1] (यानि सब चीज़ें ख़ुदा की मिलकियत हैं।) और तौहीदे हाकिमियत[2] (यानि क़ानून सिर्फ ख़ुदा का है।) भी तौहीद की क़िस्मों में से हैं।

7– नबियों के मोअ्जज़े ख़ुदा की तरफ से हैं।

हमारा अक़ीदा है कि: तौहीद अफ़आली उस सच्चाई को बताती है कि पैग़म्बरों के ज़रिए जो मोजिज़ों और आम चलन के ख़िलाफ जो काम किये गये हैं वह सब ख़ुदा के इजाज़त से ही हुए हैं। इसलिए कुर्आन ने हज़रत ईसा (अ0) के बारे में फ़रमाया है:

"وَتُبْرِئُ الْاَكْمَهَ وَالْاَبْرَصَ بِاِذْنِی وَاِذْ تُخْرِجُ الْمَوْتٰی بِاِذْنِی."

[तुम पैदाईशी अन्धेपन और कोढ़ के (बेइलाज) रोगी को मेरे हुक्म से अच्छा करते हो और मेरे हुक्म से मुर्दों को ज़िन्दा करते हो।]

(सूरा 'माएदा' आयत 110)

हज़रत सुलेमान (अ0) के एक वज़ीर के बारे में इरशाद होता है कि:

"قَالَ الَّذِی عِنْدَهُ عِلْمٌ مِّنَ الْكِتَابِ اَنَا آتِیكَ بِهٖ قَبْلَ اَنْ یَّرْتَدَّ اِلَیكَ طَرْفُكَ فَلَمَّا رَاٰهُ مُسْتَقِراً عِنْدَهُ قَالَ هٰذَا مِنْ فَضْلِ رَبِّی."

[आसमानी किताब के इल्म में से जिसके पास कुछ था उसने कहा इससे पहले कि आप अपनी आँख झपकाएँ मैं उस (रानी के

---

(1) "لِلّٰهِ مَا فِی السَّمٰوَاتِ وَمَا فِی الْاَرْضِ." (सूरा 'बक़र' आयत 284)

[ज़मीन आसमान में जो कुछ है वह ख़ुदा के लिए है।]

(2) "وَمَنْ لَّمْ یَحْكُمْ بِمَاۤ اَنْزَلَ اللّٰهُ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْكَافِرُوْنَ." (सूरा 'माएदा' आयत 44)

तख़्त को) आपके पास ले आऊँगा और जब उस (सुलेमान अ0) ने उसे अपने पास मौजूद देखा तो कहा: यह मेरे पालने वाले के इनाम (और इरादे) का नतीजा है।] (सूरा 'नम्ल' आयत 40)

इसलिए ख़ुदा के हुक्म और इजाज़त से ला इलाज मरीज़ों को अच्छा कर देना और मुर्दों को ज़िन्दा करने की बात को हज़रत ईसा (अ0) की कहना (जैसा कि क़ुर्आन में साफ आया है) बस तौहीद ही है।

8– ख़ुदा के फरिश्ते

हम ख़ुदा के फरिश्तों पर ईमान रखते हैं (मानते हैं), जिनमें से हर एक की ख़ास ज़िम्मेदारी है। उनमें से कुछ नबियों की तरफ वही ले जाने पर लगाए गए थे। (सूरा 'बक़रा' आयत 97)

कुछ फरिश्ते इन्सानों के कामों की हिफाज़त पर लगे हुए हैं। (सूरा 'इंफितार' आयत 10)

कुछ रूहें क़ब्ज़ करने (मारने) पर लगे हुए हैं।

(सूरा 'अअ्राफ' आयत 37)

कुछ अडिग मोमिनों की मदद पर लगे हुए हैं।

(सूरा 'फुस्सिलत' आयत 30)

कुछ जंगों में मोमिनों की मदद करने पर लगे हुए हैं।

(सूरा 'अह्ज़ाब' आयत 9)

कुछ नाफ़रमान क़ौमों को सज़ा देने पर लगे हुए हैं।

(सूरा 'हूद' आयत 77)

इसके अलावा कुछ फरिश्तें काएनात के सिस्टम की कुछ दूसरी अहम ज़िम्मेदारियाँ सम्भाले हुए हैं।

चूँकि सब ज़िम्मेदारियाँ ख़ुदा के हुक्म, इजाज़त, उसकी ताक़त और मदद से पूरी हो पा रही हैं इसलिए यह

तौहीद रबुव्वती और तौहीदे अफआली से किसी तरह अलग नहीं बल्कि इनकी ताईद करती हैं। इसी से यह बात भी साफ हो गई कि मासूम (निर्दोष) नबियों और फरिश्तों का सिफारिश करना चूँकि खुदा की इजाज़त से है इसलिए वह भी बस तौहीद है।

"مَا مِنْ شَفِيْعٍ اِلَّا مِنْ بَعْدِ اِذْنِهٖ."

[उसकी इजाज़त के बिना कोई सिफारिशी नहीं हो सकता।]

(सूरा 'यूनुस' आयत 3)

इस बारे में और बातचीत नबियों की नुबुव्वत के चैप्टर में आयगी।

9– इबादत, खुदा के लिए ख़ास है

हमारा अक़ीदा है कि: इबादत सिर्फ उसी पाक ज़ात के साथ ख़ास है। (जैसा कि तौहीद के बारे में जो कहा गया है उसमें इशारा हुआ है) इसलिए जो कोई इसके अलावा किसी और की इबादत करे वह शिर्क करने वाला है। नबियों की तबलीग़ का घेरा भी यही था कि:

"اُعْبُدُوا اللّٰهَ مَا لَكُمْ مِنْ اِلٰهٍ غَيْرُهٗ."

[खुदा की इबादत करो, उसके सिवा तुम्हारा कोई खुदा नहीं है।]

यह बात नबियों की ज़ुबानी कई बार क़ुर्आन में बयान हुई है। (सूरा 'अअ्राफ' आयत 59, 65, 73, 85, व ....)

ध्यान देने की बात है कि हम मुसलमान अपनी नमाज़ों में सूरः हम्द पढ़ते वक़्त इस इस्लामी पहचान को दोहराते रहते हैं।



"اِیَّاکَ نَعْبُدُ وَاِیَّاکَ نَسْتَعِیْنُ"

[हम सिर्फ तेरी ही इबादत करते हैं और सिर्फ तुझ से ही मदद माँगते हैं।]

यह बात खुली हुई है कि नबियों और फ़रिश्तों की सिफारिश पर ईमान रखना (जो खुदा के हुक्म से हो और जिसका बयान कुर्आनी आयतों में भी आया है) उनकी इबादत नहीं है।

इसी तरह नबियों का ज़रिया बनाना यानी उनसे यह दरख़्वास्त करना कि खुदा के दरबार में मेरी मुश्किल के हल के लिए दुआ करें न तो पूजा है न ही इबादत और न ही तौहीद अफ़आली या तौहीद इबादत से टकराती है। नुबुव्वत पर चैप्टर में इसकी तफसील आयगी।

10– खुदा तआला की ज़ात की हक़ीक़त सबसे छुपी हुई है

हमारा अक़ीदा है कि: खुदा के वजूद के असर सारी दुनिया पर छाए हुए हैं। इसके बाद भी उस सच्ची ज़ात की सच्चाई किसी पर खुली नही। कोई उसकी हक़ीक़त तक नहीं पहुँच सकता, क्योंकि उसकी ज़ात किसी भी तरह से घिरी हुई नहीं है जबकि हम हर तरह से घिरे हुए और सिमटे हुए हैं। इसी वजह से हमारे लिए (हमारी सोच में भी) उसकी ज़ात को घेरना मुशिकल है।

"اَلَا اِنَّهٗ بِکُلِّ شَیْءٍ مُّحِیْطٌ."

[बस समझे रहो कि वह हर चीज़ को घेरे हुए है।]

(सूरा 'फुस्सिलत' आयत 54)

"وَاللّٰهُ مِن وَّرَآئِهِمْ مُحِيطٌ"

[ख़ुदा उन सबको घेरे हुए है।] (सूरा 'बुरूज' आयत 20)

नबी–ए–अकरम (स0) की एक मशहूर हदीस है। आप (स0) ने फरमाया:

"مَا عَبَدْنَاکَ حَقَ عِبَادَتِکَ وَمَا عَرَفْنَاکَ حَقَّ مَعْرِفَتِکَ."

[जिस तरह तेरी ज़ात इबादत के लायक़ है हमने उस तरह तेरी इबादत नहीं की और जिस तरह तेरी पहचान का हक़ है हमने उस तरह तेरी पहचान नहीं पायी।] (बहारुलअनवार जि–68 पे–23)

लेकिन इसका मतलब यह नही है कि चूँकि हम उसकी पाक ज़ात के बारे में पूरी तरह जानने की ताक़त नहीं रखते इसलिए कुछ भी जानने से भी हाथ खींच लें और अल्लाह की पहचान के बारे में सिर्फ इन लफ्ज़ों को काफी समझें जिनका कोई मतलब न हो। इसे "مَعْرِفَةُ اللّٰه." (अल्लाह की पहचान) को छोड़ देना कहते हैं जिसे हम क़बूल नही करते और इस पर अक़ीदा नहीं रखते, क्योंकि कुर्आन और बाक़ी सभी आसमानी किताबें अल्लाह को समझने और अल्लाह को पहचानने के लिए नाज़िल हुई हैं।

इस सिलसिले में बहुत सी मिसालें दी जा सकती हैं, जैसे हम रूह की असलियत को जानते नहीं हैं, लेकिन हम उसके बारे में यक़ीनी तौर पर इजमाली (सिमटी) पहचान रखते हैं। हम जानते हैं कि रूह मौजूद है और उसके आसार (लक्षण) भी हम देखते हैं।

इमाम मुहम्मद बाक़िर (अ0) की एक बड़ी उमदा हदीस है। आपने फरमाया:

"كُلَّمَا مَيَّزْتُمُوهُ بِأَوْهَامِكُم فِى أَدَقِّ مَعَانِيهِ مَخْلُوقٌ مَصْنُوعٌ

مِثْلُكُم مَرْدُوْدٌ اِلَيْكُم."

[जिस चीज़ का भी ख़याल उसके बहुत गहरे मानों के साथ आप अपने दिमाग़ में करें वह आपकी बनाई हुई और आपका बनाया हुआ है और ख़ुद आपकी तरह है और वह आपकी तरफ पलटने वाला होता है और ख़ुदा इससे कहीं ऊँचा है।] (बहारुलअनवार जि-66 पे-293)

अमीरुलमोमिनीन हज़रत अली (अ0) की एक हदीस में है: अल्लाह की पहचान का छोटा और बारीक (सूक्ष्म) मतलब एक ख़ूबसूरत और साफ अन्दाज़ में इस तरह बयान हुआ है:

"لَمْ يَطْلَعِ اللّٰهُ سُبْحَانَهُ الْعُقُوْلَ عَلٰى تَحْدِيْدِ صِفَتِهِ، وَلَمْ يَحْجُبْهَا اَمْوَاجَ مَعْرِفَتِهِ."

[ख़ुदा ने अक़लों को अपनी ख़ूबियों की हदों (और हक़ीक़त) से जानकार नहीं फरमाया और (इसके बाद भी) उन्हें ज़रूरी मारफत और पहचान से महरूम (वंचित) भी नहीं रखा।] (ग़ररुल हकम)

11– न नफी (नकारना) न तश्बीह (ख़याली रूप)

हमारा अक़ीदा है कि: जिस तरह ख़ुदा की पहचान और उसकी ख़ूबियों की पहचान को छोड़ना और उससे अलग हो जाना सही नहीं है उसी तरह ख़याली तस्वीर बनाना भी ग़लत और शिर्क है। यानि हम यह भी नहीं कह सकते कि उसकी पाक ज़ात बिलकुल पहचानी ही नही जा सकती और हमारे पास उसकी पहचान का कोई तरीक़ा ही नहीं है। इसी तरह उसे पैदा होने वाली चीज़ों के जैसा समझना या उनसे तश्बीह (उपमा) भी नहीं दी जा सकती। उनमें से एक आगे बढ़ाना है और दूसरा पीछे रह जाना है। (ग़ौर कीजिये)



दूसरा चैप्टर

दूसरा चैप्टर

अल्लाह के नबियों की नुबुव्वत

12– नबियों के भेजने का मक़सद

हमारा अक़ीदा है किः ख़ुदा ने इंसानों को रास्ता दिखाने के लिए और उनको चाहा कमाल और सदा की नेकी व भलाई तक पहुँचाने के लिए नबी (अल्लाह के संदेशवाहक) और रसूल (ख़ुदा के दूत) भेजे हैं। अगर नबी न भेजे जाते तो पैदाइश का मक़सद न मिला होता, इंसान बहकने के अन्धेरों में भटकता रहता और मक़सद ख़त्म हो जाता।

"رُسُلاً مُّبَشِّرِيْنَ وَمُنْذِرِيْنَ لِئَلَّا يَكُوْنَ لِلنَّاسِ عَلَى اللّٰهِ حُجَّةٌ بَعْدَ الرُّسُلِ وَكَانَ اللّٰهُ عَزِيْزًا حَكِيْماً.

[रसूल (भेजे) जो अच्छी ख़बर देने वाले और डराने वाले थे ताकि ख़ुदा पर लोगों की तरफ से दलील रहे। (और वह सबको नेकी का रास्ता दिखाएँ और सभी लोगों पर दलील पूरी हो जाए) ख़ुदा बड़ाई और इज़्ज़त वाला और समझ वाला है।] (सूरा 'निसा' आयत 165)

हमारा अक़ीदा है किः उनमें से पाँच नबी ''उलुलअज़्म'' हैं। वे शरीअत लाये थे और आसमानी किताब रखते थे। और एक नया दीन लेकर आए थे। वे ये हैंः हज़रत नूह (अ0), हज़रत इब्राहीम (अ0), हज़रत मूसा (अ0), हज़रत ईसा (अ0) और हज़रत मुहम्मद (स0)।

"وَاِذْ اَخَذْنَا مِنَ النَّبِيّٖنَ مِيْثَاقَهُمْ وَمِنْكَ وَمِنْ نُوْحٍ وَّاِبْرٰهِيْمَ وَمُوْسٰى وَعِيْسَى ابْنِ مَرْيَمَ وَاَخَذْنَا مِنْهُمْ مِيْثَاقًا غَلِيْظاً."

[वह वक़्त याद करो जब हमने नबियों से अहद (प्रण) लिया

और (इसी तरह) तुम से, और नूह, इब्राहीम, मूसा और ईसा इब्ने मरियम (मरियम के बेटे) से। हमने उन सबसे मज़बूत (गहन) अह्द व वादा लिया (कि वह अपनी रिसालत पर अमल (काम) करने के लिए और आसमानी किताब की तालीमें फैलाने के लिए कोशिश करते रहें)।] (सूरा 'अह्ज़ाब' आयत 7)

एक और जगह इरशाद होता है:

"فَاصْبِرْ كَمَا صَبَرَ أُولُوا الْعَزْمِ مِنَ الرُّسُلِ."

[इस तरह सब्र करो और जमे रहो जिस तरह कि उलुलअज़्म रसलूों ने सब्र और जम कर दिखाया।] (सूरा 'अह्क़ाफ़' आयत 35)

हमारा अक़ीदा है कि: पैग़म्बरे इस्लाम (स0), ख़ातमुल अम्बिया (खुदा के आख़री नबी) और खुदा के आख़री रसूल हैं। उनकी शरीअत (विधान) पूरी दुनिया के लोगों के लिए है और जब तक दुनिया बाक़ी है यह शरीअत भी बाक़ी रहेगी। इस्लाम की तालीमों, मआरिफ (जानकारियों) और हुक्मों का फैलाव और गहराई ऐसी है कि वह क़यामत तक इंसान की सभी रूहानी (आध्यात्मिक) और माद्दी ज़रुरतों को पूरा करती हैं। जो भी नई नुबुव्वत और रिसालत का दावा करने वाला हो उसका दावा गलत, असत्य है और बे बुनियाद है।

इरशाद होता है:

"مَا كَانَ مُحَمَّدٌ أَبَا أَحَدٍ مِنْ رِجَالِكُمْ وَلَكِنْ رَسُولَ اللَّهِ وَخَاتَمَ النَّبِيِّينَ وَكَانَ اللَّهُ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيماً."

[मुहम्मद तुम्हारे मर्दों में से किसी के बाप नहीं हैं, लेकिन वह खुदा के रसूल और नबियों के सिलसिले को ख़त्म करने वाले हैं। खुदा हर चीज़ से जानकार है (और जो कुछ ज़रूरी था उसे

दिया है)।] (सूरा 'अहज़ाब' आयत 40)

13– आसमानी दीन के मानने वालों के साथ अमन–शन्ति भरा रहन–सहन

यूँ तो हम सिर्फ इस्लाम को इस ज़माने में ख़ुदा का बाक़ाएदा और क़ानूनी दीन समझते हैं लेकिन हम अक़ीदा रखते हैं कि दूसरे आसमानी दीन के मानने वालों के साथ रवादारी वाला बरताव बाक़ी रखना चाहिए, चाहे वह इस्लामी मुल्क में रहते हों या कहीं और, सिवाए उन लोगों के जो इस्लाम और मुसलमानों के मुक़ाबले में आ गये हों। इरशाद होता है:

"لَا يَنْهَاكُمُ اللّٰهُ عَنِ الَّذِيْنَ لَمْ يُقَاتِلُوْكُمْ فِي الدِّيْنِ وَلَمْ يُخْرِجُوْكُمْ مِنْ دِيَارِكُمْ اَنْ تَبَرُّوْهُمْ وَتُقْسِطُوْا اِلَيْهِمْ اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُقْسِطِيْنَ."

[जिन लोगों ने तुमसे दीन के बारे में जंग नहीं की थी और न तुम्हें घर से निकाला था अल्लाह तआला तुम्हें उनके बारे में इस बात से नहीं रोकता कि तुम उनके साथ भलाई और इंसाफ करो कि ख़ुदा इंसाफ करने वालों को दोस्त रखता है।] (सूरा 'मुमतहिना' आयत 8)

हमारा अक़ीदा है कि: दुनिया के सभी लोगों पर इस्लामी तालीमों और इस्लाम की सच्चाई को दलील और प्रमाण से रौशन और साफ किया जा सकता है। इस्लाम में इतना लगाव है कि अगर इसे अच्छी तरह सामने किया जाए तो बहुत से लोगों को अपनी तरफ खींच लेगा, ख़ास तौर से इस बात को देखते हुए कि आज की दुनिया में इस्लाम का पैग़ाम सुनने के लिए बहुत से लोग तैयार हैं।

इसी वजह से हमारा अक़ीदा है कि: इस्लाम को दबाव

और ज़बरदस्ती से लोगों पर नहीं थोपना चाहिए।

"لَآ اِكْرَاهَ فِي الدِّيْنِ قَدْ تَبَيَّنَ الرُّشْدُ مِنَ الْغَيِّ."

[दीन क़बूल करने में ज़बरदस्ती नहीं है क्योंकि सही और ग़लत रास्ते की बीच फ़र्क़ साफ है।] (सूरा 'बक़रा' आयत 256)

हमारा अक़ीदा है कि: इस्लाम के भरपूर हुक्मों पर मुसलमानों का चलते रहना इस्लाम की पहचान की एक और वजह साबित होगी। इसलिए ज़ोर–ज़बरदस्ती की ज़रूरत नहीं है।

14– नबियों का सारी ज़िन्दगी मासूम (बेगुनाह) होना

हमारा अक़ीदा है कि: ख़ुदा के सारे नबी मासूम हैं, यानि ज़िन्दगी भर (नुबुव्वत से पहले और नुबुव्वत के बाद) वे ख़ुदा की मदद से हर तरह की कमियों, गुनाहों और ग़लतियों से बचे रहते हैं। अगर वे कोई गुनाह या ग़लती करें तो उनकी नुबुव्वत से भरोसा उठ जायेगा। लोग उन्हें अपने और ख़ुदा के बीच एक भरोसे वाला वसीला (साधन) नहीं समझेंगे और अपनी ज़िन्दगी के सभी कामों में उन्हें अपना नेता व रास्ता दिखाने वाला नहीं मानेंगे।

इसी वजह से हमारा अक़ीद है कि: क़ुर्आन की कुछ आयतों में ज़ाहिरी तौर पर नबियों के गुनाह जैसी जो बात की गई है उस से मुराद तर्के औला है। (यानी दो अच्छे कामों में से उसका चुनना जिसकी अच्छाई कम हो जबकि होना यह चाहिए कि सबसे अच्छे को चुना जाए)। दूसरे लफ्ज़ों में यह

"حَسَنَاتُ الْاَبْرَارِ سَيِّئَاتُ الْمُقَرَّبِيْنَ."

(नेक लोगों के अच्छे काम पास वालों के लिए गुनाह महसूस

होते हैं।)[1]

में शामिल है क्योंकि हर कोई से उसके दर्जे के लिहाज़ से ही उम्मीद रखी जाती है।

15– वे ख़ुदा के हुक्म पर चलने वाले बन्दे हैं

हमारा अक़ीदा है कि: ख़ुदा के नबी और रसूलों की सबसे बड़ी पहचान यह है कि वह ख़ुदा के आज्ञाकारी यानी उसके हुक्म मानने वाले बन्दे होते हैं। इसी वजह से हम अपनी पाँच वक़्त की नमाज़ों में यह बात दोहराते हैं:

"وَاَشْهَدُ اَنَّ مُحَمَّداً عَبْدُهُ وَرَسُوْلُهُ."

[मैं गवाही देता हूँ कि मुहम्मद ख़ुदा के बन्दे और रसूल हैं।]

हमारा अक़ीदा है कि: किसी भी नबी ने ख़ुदाई का दावा नहीं किया और लोगों से अपनी पूजा करने को नहीं कहा।

"مَا كَانَ لِبَشَرٍ اَنْ يُّؤْتِيَهُ اللّٰهُ الْكِتَابَ وَالْحُكْمَ وَالنُّبُوَّةَ ثُمَّ يَقُوْلَ لِلنَّاسِ كُوْنُوْا عِبَادًا لِّيْ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ."

[किसी इंसान के लिए यह जायज़ नहीं है कि ख़ुदा उसे आसमानी किताब दे, हुक्म और नुबुव्वत दे, फिर वह लोगों से कहे कि ख़ुदा को छोड़कर मेरी इबादत करो।] (सूरा 'आले इमरान' आयत 79)

यहाँ तक कि हज़रत ईसा (अ0) ने भी लोगों को हरगिज़ अपनी इबादत को नहीं कहा। वह हमेशा ख़ुद को ख़ुदा का बन्दा और उसका पैदा किया बताते रहे। इरशाद होता है:

"لَنْ يَّسْتَنْكِفَ الْمَسِيْحُ اَنْ يَكُوْنَ عَبْدًا لِّلّٰهِ وَلَا الْمَلٰٓئِكَةُ الْمُقَرَّبُوْنَ."

---

(1) अल्लामा मजलिसी ने बिहारुलअनवार में यह जुमला एक मासूम से नक़ल किया है लेकिन उनके नाम का ज़िक्र नहीं किया। (बिहारुलअनवार जि–25 पे–205)

[ईसा ने हरगिज़ इस बात से इन्कार नहीं किया कि वह ख़ुदा के बन्दे हैं और न ही उसके मुक़र्रब फ़रिश्तों ने।] (सूरा 'निसा' आयत 172)

ईसाई मत की मौजूदा तारीख़ भी यही बताती है कि तसलीस (तीन ख़ुदाओं पर अक़ीदा) का मसला ईसाई मज़हब के शुरु सौ बरसों में मौजूद न था और यह अन्दाज़ बाद में पैदा हुआ है।

16- मोअ्जज़े और इल्मे ग़ैब (अन्देखे का जानना)

सारे नबी ख़ुदा के बन्दे हैं लेकिन यह बन्दा इस बात में रुकावट नहीं बनती कि वह ख़ुदा के हुक्म और इजाज़त से पिछले की, अभी की और बाद की ग़ैबी बातों को जान जाएँ। इरशाद होता है:

"عَالِمُ الْغَيْبِ فَلَا يُظْهِرُ عَلٰى غَيْبِهٖ اَحَداً اِلَّا مَنِ ارْتَضٰى مِنْ رَّسُوْلٍ."

[ख़ुदा ग़ैब का जानने वाला है और किसी को अपनी ग़ैब के राज़ से आगाह नहीं करता सिवाए उन रसूलों के जिन्हें उसने चुन लिया है।] (सूरा 'जिन' आयत 26-27)

हम जानते हैं कि हज़रत ईसा (अ0) का एक मोअ्जज़ा था कि वह लोगों को छुपी बातों से बाख़बर करते थे।

"وَاُنَبِّئُكُمْ بِمَا تَاْكُلُوْنَ وَمَا تَدَّخِرُوْنَ فِىْ بُيُوْتِكُمْ."

[जो कुछ तुम खाते हो और अपने घरों में जमा करते हो मैं तुम्हें उसकी ख़बर देता हूँ।] (सूरा 'आले इमरान' आयत 49)

पैग़म्बरे इस्लाम (स0) भी ख़ुदा की तालीम की वजह से ग़ैब की बहुत सी बातें बयान फ़रमाते थे:

"ذٰلِكَ مِنْ اَنْبَآءِ الْغَيْبِ نُوْحِيْهِ اِلَيْكَ."

[**यह ग़ैब की बातों में से है जिन्हें हमने तुझ पर वही की है।**]

(सूरा 'यूसुफ़' आयत 102)

इसलिए अगर अल्लाह के नबी वही के ज़रिए और ख़ुदा की इजाज़त से ग़ैब की ख़बर दें तो यह न होने वाली बात नहीं। अगर कुछ आयतों में पैग़म्बरे इस्लाम (स0) के ग़ैब की 'नहीं' हुई है जैसे

"وَلَا اَعۡلَمُ الۡغَيۡبَ وَلَا اَقُوۡلُ لَكُمۡ اِنِّىۡ مَلَكٌ."

[**मैं ग़ैब का इल्म नहीं रखता और न यह कहता हूँ कि मैं फ़रिश्ता हूँ।**] (सूरा 'अन्आम' आयत 50)

तो इससे मतलब निजी और हमेशा रहने वाला इल्म है न कि वह इल्म जो ख़ुदा ने दिया हो। क्योंकि हम जानते हैं कि क़ुर्आन की आयतें एक दूसरे की तफ़सीर करती हैं।

हमारा अक़ीदा है कि: यह बड़े महान लोग ख़ुदा की इजाज़त से बड़े अहम मोअ्जज़े और न समझ में आने वाले काम अन्जाम देते थे। ख़ुदा के हुक्म से इस तरह के कामों पर ईमान न शिर्क है और न उनके बन्दा होने से टकराता है। क़ुर्आन की वज़ाहत के मुताबिक़ हज़रत ईसा (अ0) ख़ुदा के हुक्म से मुर्दों को ज़िन्दा करते थे और बे इलाज मरीज़ों को ख़ुदा के हुक्म से अच्छा कर देते थे।

"وَاُبۡرِئُ الۡاَكۡمَهَ وَالۡاَبۡرَصَ وَاُحۡىِ الۡمَوۡتٰى بِاِذۡنِ اللّٰهِ."

(सूरा 'आले इमरान' आयत 49)

17– नबियों की शिफ़ाअत (सिफारिश)

हमारा अक़ीदा है कि: सभी नबी और सबसे बढ़कर पैग़म्बरे इस्लाम (स0) को सिफारिश का हक़ पहुँचता है। वह ख़ुदा के सामने गुनाहगारों के कुछ ख़ास गिरोहों की

सिफारिश करेंगे। लेकिन यह भी ख़ुदा की इजाज़त से होगा।

"مَا مِنْ شَفِيْعٍ اِلَّا مِنْ بَعْدِ اِذْنِهٖ."

[कोई सिफारिश करने वाला नहीं है मगर ख़ुदा की इजाज़त के बग़ैर।] (सूरा 'यूनुस' आयत 3)

एक और जगह इरशाद होता है:

"مَنْ ذَا الَّذِى يَشْفَعُ عِنْدَهٗ اِلَّا بِاِذْنِهٖ."

[उसकी इजाज़त के बिना कौन उसके सामने सिफारिश कर सकता है?] (सूरा 'बक़र' आयत 255)

अगर कुछ आयतों में बिलकुल से सिफारिश की 'नहीं' की गई है जैसे:

"مِنْ قَبْلِ اَنْ يَّاْتِىَ يَوْمٌ لَّا بَيْعٌ فِيْهِ وَلَا خُلَّةٌ وَّلَا شَفَاعَةٌ."

[उस दिन के आने से पहले ख़र्च करो जिस दिन न तिजारत होगी (कि कोई अपने लिए नेकी और छुटकारा/मुक्ति ख़रीद ले) और न दोस्ती (आम दोस्तियाँ फायदा देने वाली नहीं होंगी) और न सिफारिश।] (सूरा 'बक़र' आयत 254)

तो इससे मतलब उस सिफारिश की 'नहीं' है जो ख़ुदा की इजाज़त के बिना हो या उन लोगों की सिफारिश है जो सिफारिश की सलाहियत और हक़ नहीं रखते। क्योंकि कई बार बताया जा चुका है कि क़ुर्आनी आयतें एक-दूसरे की तफसीर करती हैं।

हमारा अक़ीदा है कि: सिफारिश का ख़याल, लोगों की तरबियत, गुनाहगारों को सही रास्ते पर लाने, उन्हें नेकी की तरफ बढ़ने और उनके दिलों में उम्मीद की किरन जलाने का एक बेहतरीन ज़रिया है, क्योंकि सिफारिश बग़ैर किसी

हिसाब किताब के नहीं हो सकती, बल्कि यह सिर्फ उन लोगों के लिए है जो इसकी सलाहियत रखते हैं, यानि उनके गुनाह इस हद तक न हों कि वे सिफारिश करने वालों से अपना नाता पूरी तरह ख़त्म कर चुके हों। इसलिए सिफारिश की बात गुनाहगारों को ख़बरदार करती है कि वे अपने सभी रास्ते बन्द न करें, अपनी वापसी का रास्ता खुला रखें और सिफारिश के लिए अपनी क़ाबलियत साबित करें।

18- वसीला (साधन)

हमारा अक़ीदा है कि: ''वसीला'' भी ''सिफारिश'' की तरह है। वसीला का मसला रूहानी और माद्दी मुश्किलों में घिरे हुए लोगों को यह मौक़ा मिलता है कि ख़ुदा के वलियों का दामन पकड़ लें ताकि वे ख़ुदा की इजाज़त से ख़ुदा के सामने उनकी मुश्किलें दूर करने की दरख़्वास्त करें। यानि एक तरफ तो वे ख़ुद ख़ुदा की तरफ लौटें और दूसरी तरफ अल्लाह के वलियों को रास्ता बना लें।

इरशाद होता है कि:

''وَلَوْ أَنَّهُمْ إِذْ ظَلَمُوا أَنفُسَهُمْ جَاءُوكَ فَاسْتَغْفَرُوا اللَّهَ وَاسْتَغْفَرَ لَهُمُ الرَّسُولُ لَوَجَدُوا اللَّهَ تَوَّابًا رَّحِيمًا.''

[जब उन्होंने अपने ऊपर ज़ुल्म किया (और गुनाह कर डाला) उस वक़्त अगर वे तेरे पास आते और ख़ुदा से माफी चाहते और रसूले ख़ुदा भी उनके लिए माफी चाहते तो वे ख़ुदा को तौबा क़बूल करने वाला और मेहरबान पाते।] (सूरा 'निसा' आयत 64)

और हम हज़रत यूसुफ (अ0) के भाईयों के क़िस्से में देखते हैं कि उन्होंनें अपने बाप को वसीला बनाया और कहा कि:

"يـآ ابَانَا اسْتَغْفِرْلَنَا ذُنُوبَنَآ اِنَّا كُنَّا خَاطِئِيْنَ."

[ऐ हमारे बाबा जान! हमारे लिए ख़ुदा से मग़फ़िरत तलब करें (माफ़ी माँग दें) क्योंकि हम ख़ता करने वाले हैं।]

उनके बूढ़े बाप (हज़रते याक़ूब अ० नबी) ने उनकी दरख़्वास्त मान ली और उनकी मदद करने का वादा करते हुए फरमायाः

"سَوْفَ اَسْتَغْفِرُ لَكُمْ رَبِّی."

[मैं तुम्हारे लिए अपने ख़ुदा से मग़फ़िरत माँगूंगा।]

(सूरा 'यूसुफ़' आयत 97-98)

यह क़िस्सा इस बात पर गवाह है कि पिछली उम्मतों में भी वसीले चाहने की रसम मौजूद थी।

लेकिन इसे अक़ली हद से आगे नहीं बढ़ना चाहिए और अल्लाह के वलियों को ख़ुदा की इजाज़त के बिना अपने तौर पर असर वाला न समझना चाहिए क्योंकि यह कुफ़्र और शिर्क की वजह बनता है। वसीले को अल्लाह के वलियों की इबादत या पूजा की शक्ल नहीं देनी चाहिए कि यह भी कुफ़्र और शिर्क है क्योंकि वे ख़ुदा की इजाज़त से हट कर अपने आप कुछ करने वाले नहीं हैं।

"قُلْ لَآ اَمْلِكُ لِنَفْسِیْ نَفْعًا وَّلَا ضَرًّا اِلَّا مَاشَآءَ اللّٰهُ."

[कहो! मैं अपने लिए भी कुछ करने का मालिक नहीं हूँ मगर यह कि ख़ुदा चाहे।] (सूरा 'अअ्राफ़' आयत 188)

आम तौर पर सभी इस्लामी फ़िरक़ों (सम्प्रदायों) के मानने वाले लोगों में वसीले को लेकर उतार-चढ़ाव दिखाई देता है। उनकी हिदायत और सही रास्ता दिखाना ज़रूरी है।

19– नबियों के बुलावे (धर्म के पैग़ाम) के बुनियादी उसूल एक हैं

हमारा अक़ीदा है कि: ख़ुदा के सभी रसूल एक ही मक़सद की तरफ आए थे। उनका मक़सद ख़ुदा पर ईमान और क़यामत पर ईमान के ज़रिए लोगों को भलाई और इस्लामी समाजों में सही दीनी तालीम व तरबियत और चाल–चलन को मज़बूती देना था। इसी वजह से हम हरेक नबी का एहतिराम, आदर करते हैं। यह बात हमें क़ुर्आन ने सिखाई है। इरशाद होता है:

"لا نُفَرِّقُ بَيْنَ اَحَدٍ مِّنْ رُّسُلِهِ."

[हम ख़ुदा के रसूलों में किसी तरह का फ़र्क़ नहीं करते।]

(सूरा 'बक़र' आयत 285)

वक़्त गुज़रने के साथ–साथ और ऊँची तालीमों के लिए इन्सान की तैयारी के साथ–साथ अल्लाह के दीन भी धीरे–धीरे मुकम्मल होने की तरफ बढ़ते गए और उनकी तालीम ज़्यादा से ज़्यादा गहरी होती चली गयीं। यहाँ तक कि आख़री और मुकम्मल दीन यानी इस्लाम की बारी आ गई और यह फरमान आ गया:

"اَلْيَومَ اَكْمَلْتُ لَكُمْ دِيْنَكُمْ وَاَتْمَمْتُ عَلَيْكُمْ نِعْمَتِىْ
وَرَضِيْتُ لَكُمُ الْاِسْلَامَ دِيْناً."

[आज मैंने तुम्हारे लिए तुम्हारे दीन को पूरा कर दिया और तुम पर अपना इनाम पूरा कर दिया और इस्लाम को (हमेशा रहने वाले) दीन के तौर पर क़बूल किया।] (सूरा 'माएद' आयत 3)

20– पिछले नबियों की भविष्यवाणियाँ

हमारा अक़ीदा है कि: बहुत से पिछले नबियों ने अपने बाद वाले नबियों के आने की ख़बर दी है। हज़रत मूसा (अ0) और हज़रत ईसा (अ0) ने हमारे पैग़म्बरे (स0) के बारे में खुली निशानियाँ बतायीं जिनमें से अब भी कुछ उनकी किताबों में मौजूद हैं।

"اَلَّذِيْنَ يَتَّبِعُوْنَ الرَّسُوْلَ النَّبِيَّ الْاُمِّيَّ الَّذِىْ يَجِدُوْنَهٗ مَكْتُوْبًا عِنْدَهُمْ فِى التَّوْرَاةِ وَالْاِنْجِيْلِ...اُولٰٓئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُوْنَ."

[जो लोग उम्मी नबी के पीछे चलते हैं यानी उस पैग़म्बर की जिसकी निशानियाँ वे अपने पास मौजूद तौरात व इन्जील में पाते हैं वे कामियाबी पाने वाले हैं।] (सूरा 'अअ्राफ' आयत 157)

इसी वजह से तारीख़ (इतिहास) बताती है कि पैग़म्बरे इस्लाम (स0) से कुछ ज़माने पहले बहुत से यहूदी मदीने आ गए थे और बड़ी बेसब्री से हुज़ूर (स0) के आने का इन्तिज़ार करने लगे क्योंकि उन्होंने अपनी किताबों में देखा था कि आप (स0) इस सरज़मीन से ज़ाहिर होंगे। आपके ज़ाहिर होने के बाद उनमें से कुछ ईमान ले आए और कुछ जिनके फाएदे ख़तरे में पड़ गए थे उन्होंने आपकी मुख़ालेफत की।

21– नबी और ज़िन्दगी के सभी पहलुओं का सुधार

हमारा अक़ीदा है कि: नबियों पर जो दीन नाज़िल हुए हैं ख़ास तौर से दीने इस्लाम, वह सिर्फ अपनी ज़िन्दगी के सुधार या सिर्फ रूहानी और चाल–चलन के मसले बयान करने के लिए नहीं बल्कि वह सभी समाजी तरह से भी सुधार करने वाले हैं। रोज़मर्रा की ज़िन्दगी की बहुत सी ज़रूरी जानकारियाँ और बातें लोगों ने इन्हीं से सीखीं हैं। उनमें से

कुछ की तरफ कुर्आन में भी इशारा हुआ है।

और हमारा अक़ीदा है कि: उन नबियों का एक बड़ा मक़सद इन्सानी समाज में इंसाफ का बोलबाला करना था। इरशाद होता है:

"لَقَدْ اَرْسَلْنَا رُسُلَنَا بِالْبَيِّنَاتِ وَاَنْزَلْنَا مَعَهُمُ الْكِتَابَ وَالْمِيْزَانَ لِيَقُوْمَ النَّاسُ بِالْقِسْطِ."

[हमने अपने रसूलों को खुली दलीलों के साथ भेजा और हमने उनके साथ आसमानी किताबें और मीज़ान (हक़ को बातिल से पहचानने की निशानी और इंसाफी क़ानून) नाज़िल किये ताकि (दुनिया के) लोग इंसाफ क़ायम करने के लिए उठ खड़े हों।]

(सूरा 'हदीद' आयत 25)

22– क़ौम देश, जाति और नसल से बड़ाई नहीं

हमारा अक़ीदा है कि: खुदा के नबी ख़ास तौर से पैग़म्बरे इस्लाम (स0) किसी तरह के नसल और क़ौम से बड़ाई को क़बूल नहीं करते थे बल्कि दुनिया की सभी क़ौमें, समाज, नसलें और ज़बानें उनकी नज़र में बराबर थीं। कुर्आन ने सभी इंसानों को पुकारते हुए फरमाया है:

"يَآ اَيُّهَا النَّاسُ اِنَّا خَلَقْنَاكُمْ مِنْ ذَكَرٍ وَّاُنْثٰى وَجَعَلْنَاكُمْ شُعُوْبًا وَّقَبَائِلَ لِتَعَارَفُوْا اِنَّ اَكْرَمَكُمْ عِنْدَ اللّٰهِ اَتْقَاكُمْ."

[ऐ लोगो! हमने तुमको एक मर्द और एक औरत से पैदा किया और तुम्हें क़बीले और ख़ानदानों में बाँट दिया ताकि एक दूसरे को पहचान सको। (लेकिन यह बड़ाई की निशानी नहीं है) तुम में खुदा के यहाँ सबसे इ़ज़्ज़त वाला वह है जो ज़्यादा तक़्वे वाला हो।]

(सूरा 'हुजरात' आयत 13)



पैग़म्बरे इस्लाम (स0) की एक मशहूर हदीस है कि आप ने मिना के मैदान में (हज के मौक़े पर) ऊँट पर सवार होकर लोगों को मुख़ातब करके फरमाया:

"يَآ اَيُّهَا النَّاسُ! اَلَا اِنَّ رَبَّكُمْ وَاحِدٌ وَاِنَّ اَبَاكُمْ وَاحِدٌ اَلَا لَا فَضْلَ لِعَرَبِيٍ عَلٰى عَجَمِيٍ، وَلَا لِعَجَمِيٍ عَلٰى عَرَبِيٍ وَلَا لِاَسْوَدٍ عَلٰى اَحْمَرٍ وَلَا لِاَحْمَرٍ عَلٰى اَسْوَدٍ اِلَّا بِالتَّقْوٰى اَلَا هَلْ بَلَّغْتُ؟ قَالُوْا نَعَمْ! قَالَ لِيُبَلِّغَ الشَّاهِدُ الْغَائِبَ."

[ऐ लोगो! जान लो: तुम्हारा ख़ुदा एक है और तुम्हारा बाप एक है, न किसी अरबी को अजमी पर और न किसी अजमी को किसी अरबी पर, न काले को गेहुवें रंग वाले पर और न गेहुवें रंग वाले को काले पर कोई बड़ाई मिली हुई है मगर तक़्वे के ज़रिए। क्या मैंने ख़ुदा का हुक्म तुम तक पहुँचा दिया? सबने कहा: हाँ। आप (स0) ने फरमाया: जो मौजूद हैं वह यह बात उन तक पहुँचा दें जो मौजूद नहीं हैं।]

(तफसीरे कुरतुबी जि-9 पे-61-62)

23- इस्लाम और इंसानी फितरत (प्रकृति)

हमारा अक़ीदा है कि: ख़ुदा, तौहीद और नबियों की तालीमों के उसूलों को मानना सभी इंसानों में फितरी तौर पर पाया जाता है। नबी इस फल देने वाले बीज की सिंचाई वही के ज़रिए करते थे और शिर्क और अलगाव की घास-फूस उससे दूर करते थे। इरशाद होता है:

"فِطْرَتَ اللّٰهِ الَّتِىْ فَطَرَ النَّاسَ عَلَيْهَا لَا تَبْدِيْلَ لِخَلْقِ اللّٰهِ ذٰلِكَ الدِّيْنُ الْقَيِّمُ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا يَعْلَمُوْنَ."

[यह (ख़ुदा का सच्चा दीन) ऐन फ़ितरत है जिस पर ख़ुदा ने तमाम इंसानों को पैदा किया है। ख़ुदा की पैदाईश में कोई कमी नहीं है। (और यह फ़ितरत तमाम इंसानों में मौजूद है)। यह है मज़बूत दीन, लेकिन अकसर लोग नहीं जानते।] (सूरा 'रूम' आयत 30)

यही वजह है कि पूरी इंसानी तारीख़ में इंसानों के बीच हमेशा दीन मौजूद रहा है और बड़े तारीख़ लिखने वालों के अक़ीदे के मुताबिक़ बेदीनी कहीं-कहीं और कभी-कभी नज़र आती है। यहाँ तक कि सालों साल तक दीन के दुश्मनों के प्रोपेगण्डे का शिकार रहने वाले समाज आज़ादी पाते ही दीन की तरफ पलटीं, लेकिन इस बात का इंकार नहीं किया जा सकता कि बहुत सी पिछली क़ौमों की इल्मी (ज्ञान की) सतह (Level) के गिरने की वजह उनके दीनी अक़ीदों और रीति रिवाजों में बहुत सी बेकार की बातें भी दाख़िल हो जातीं थीं। अल्लाह के नबियों का ख़ास काम इंसानों के फ़ितरत के आईने से इन बेकार बातों की धूल को दूर करना था।



तीसरा चैप्टर

तीसरा चैप्टर

कुर्आन और आसमानी किताबें

24- आसमानी किताबों के नाज़िल होने (उतरने) का फलसफा

हमारा अक़ीदा है कि: खुदा ने इंसानों की हिदायत और उनको रास्ता दिखाने के लिए कई आसमानी किताबें नाज़िल की हैं, जिनमें इब्राहीम (अ0) और नूह (अ0) के सहीफे (ग्रंथ), तौरात व इन्जील और सबसे बड़ी किताब कुर्आने मजीद है। अगर यह किताबें नाज़िल न होतीं तो इंसान खुदा को पहचानने और खुदा की इबादत के रास्ते में ग़लती का शिकार हो जाता और वह तक़्वे (संयम), तरबियत और चाल-चलन के उसूलों और उन सामाजिक क़ानूनों से दूर हो जाता जिनकी उसे ज़रूरत थी।

यह आसमानी किताबें रहमत के बादलों की तरह दिलों पर उतरीं। इन किताबों ने इंसान की फितरत में तक़्वा, नेक चलन, अल्लाह की पहचान और इल्म व सूझ-बूझ के बीज बोए और उनको परवान चढ़ाया।

इरशाद होता है:

"اٰمَنَ الرَّسُوْلُ بِمَآ اُنْزِلَ اِلَيْهِ مِنْ رَّبِّهٖ وَالْمُؤْمِنُوْنَ كُلٌّ اٰمَنَ بِاللّٰهِ وَمَلٰٓئِكَتِهٖ وَكُتُبِهٖ وَرُسُلِهٖ."

[रसूल उस चीज़ पर ईमान ले आया जो उसके पालने वाले की तरफ से उस पर नाज़िल हुई और सभी मोमिन भी खुदा, उसके फरिश्तों, उसकी किताबों और उसके रसूलों पर ईमान ले आए।]

(सूरा 'बक़र' आयत 285)



अफसोस कि वक़्त गुज़रने के साथ–साथ जाहिल और ना अहल लोगों की वजह से बहुत सी आसमानी किताबें फेर–बदल का शिकार हो गई हैं और उनमें ग़लत ख़याल बढ़ा दिये गये। लेकिन इसके बाद भी आगे आने वाली दलीलों के मुताबिक़ कुर्आन मजीद हर तरह के फेरबदल से बचा रहा है। यह सभी ज़मानों वक़्तों में और हर समय सूरज की तरह उजाला करता आया है और दिलों को रौशनी देता रहा है।

इरशाद होता है:

"قَدْ جَآءَ كُمْ مِنَ اللّٰهِ نُوْرٌ وَّكِتَابٌ مُّبِيْنٌ يَّهْدِىْ بِهِ اللّٰهُ مَنِ اتَّبَعَ رِضْوَانَهٗ سُبُلَ السَّلَامِ."

[ख़ुदा की तरफ से, तुम्हारे पास नूर (प्रकाश) और रौशन किताब आई। ख़ुदा इनकी बरकत से उन लोगों में सलामती (और नेकी) के रास्तों की तरफ हिदायत करता है जो इसकी ख़ुशख़बरी चाहते हों।] (सूरा 'माएद' आयत 15–16)

25– कुर्आन, पैग़म्बरे इस्लाम (स0) का सबसे बड़ा मोअ्जज़ा

हमारा अक़ीदा है कि: कुर्आन पैग़म्बरे इस्लाम (स0) का सबसे अहम मोअ्जज़ा है। यह न सिर्फ फसाहत, बलाग़त, बयान की मिठास (शैली की ख़ूबसूरती) और भरपूर माने की सजावट (सार्थकता) के लेहाज़ से मोअ्जज़ा है बल्कि दूसरे कई तरह से इसमें मोअ्जज़ा पाया जाता है। उनकी तफसील अक़ाएद और इल्मे कलाम (धर्म वाक्शास्त्र) की किताबों में लिखी है।

इसी वजह से हमारा अक़ीदा है कि: कोई इसकी तरह बल्कि इसके एक सूरे जैसा कोई सूरा भी नहीं ला सकता।

जो लोग इस किताब में शक करते थे कुर्आन ने उन्हें कई बार इस बात पर ललकारा है लेकिन वे इस के मुक़ाबले पर हरगिज़ सकत नहीं रखते। इरशाद होता है:

"قُلْ لَئِنِ اجْتَمَعَتِ الْإِنْسُ وَالْجِنُّ عَلٰى اَنْ يَّاْتُوْا بِمِثْلِ هٰذَا الْقُرْآنِ لَا يَاْتُوْنَ بِمِثْلِهٖ وَلَوْ كَانَ بَعْضُهُمْ لِبَعْضٍ ظَهِيْراً."

[अगर जिन्नात और इंसान मिलकर इस कुर्आन जैसी किताब लाना चाहें तो नहीं ला सकेंगे, चाहे इस काम में वे एक दूसरे की मदद करें।] (सूरा 'असरा' आयत 88)

एक और जगह इरशाद होता है कि:

"وَاِنْ كُنْتُمْ فِيْ رَيْبٍ مِّمَّا نَزَّلْنَا عَلٰى عَبْدِنَا فَاْتُوْا بِسُوْرَةٍ مِّنْ مِّثْلِهٖ وَادْعُوْا شُهَدَاءَ كُمْ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ اِنْ كُنْتُمْ صَادِقِيْنَ."

[हमने अपने बन्दे (पैग़म्बरे इस्लाम स0) पर जो नाज़िल किया है उसमें तुम्हें शक है (तो कम से कम) इस जैसा एक सूरा ले आओ और ख़ुदा के सिवा अपने गवाहों को इस काम के लिए बुला लो, अगर तुम सच्चे हो।] (सूरा 'बक़र' आयत 23)

हम यह अक़ीदा रखते हैं कि समय गुज़रने के साथ-साथ न सिर्फ़ यह कि कुर्आन पुराना नहीं हुआ बल्कि इसके मोअ्जज़े सामने आ रहे हैं और दुनिया वालों के सामने इसके मतलब की बड़ाई और खुलती जा रही है।

हज़रत इमाम जाफ़र सादिक़ (अ0) की बतायी हुई एक हदीस में लिखा है:

"اِنَّ اللّٰهَ تَبَارَكَ وَتَعَالٰى لَمْ يَجْعَلْهُ لِزَمَانٍ دُوْنَ زَمَانٍ وَلِلنَّاسِ دُوْنَ نَاسٍ فَهُوَ فِيْ كُلِّ زَمَانٍ جَدِيْدٌ وَعِنْدَ كُلِّ قَوْمٍ غَضٌّ اِلٰى يَوْمِ الْقِيَامَةِ."

[ख़ुदा ने कुर्आन को किसी ख़ास ज़माने (काल) या कुछ ख़ास लोगों के साथ ख़ास नहीं किया। इसी वजह से वह हर ज़माने में नया और हर गिरोह के नज़दीक क़यामत तक ताज़ा है।]

(बहारुलअनवार जि–2 पे–280 ह–44)

26– उलटफेर से पाक

हमारा अक़ीदा है कि: आज दुनिया के मुसलमनों के पास जो कुर्आन है यह वही कुर्आन है जो पैग़म्बरे इस्लाम (स0) पर नाज़िल हुआ था। न इसमें कुछ कमी हुई है और न इसमें किसी चीज़ को बढ़ाया गया है।

शुरु से ही बहुत सारे वही लिखने वाले कुर्आन नाज़िल होने के बाद आयतों को लिख लेते थे। मुसलमानों की ज़िम्मेवारी थी कि दिन रात इसकी तिलावत (पाठ) करें और अपनी पाँचो नमाज़ों में इसे दोहराएँ। बहुत से लोगों ने कुर्आन को हिफ्ज़ (कण्टस्थ) कर लिया। इस्लामी समाज में कुर्आन याद करने वाले (हाफिज़ों) और क़ारियों (पाठकों) को हमेशा ख़ास दर्जा मिला रहा। इन बातों की वजह से और दूसरी वजहों से कुर्आन हर तरह के बदलाव और उलट–फेर से बचा रहा।

इसके अलावा ख़ुदा ने दुनिया के ख़त्म होने तक इसकी हिफाज़त की ज़िम्मेवारी ले ली है। ख़ुदा की इस ज़मानत के होते हुए इसमें बदलाव और उलट–फेर मुमकिन नहीं। इरशाद होता है:

"اِنَّا نَحْنُ نَزَّلْنَا الذِّكْرَ وَاِنَّا لَهُ لَحَافِظُوْنَ."

[हमने कुर्आन नाज़िल किया है और यक़ीनी तौर (निश्चय ही) पर हम ही इसकी हिफाज़त करेंगे।] (सूरा 'हिज्र' आयत 9)

सभी बड़े–बड़े शीआ व सुन्नी उलमा और मुहक़्क़िक़ (शोधकर्ता) इस बात पर एक मत हैं कि कुर्आन में किसी तरह की तहरीफ (फेरबदल) नहीं हुई। दोनों फ़िरक़ों से बहुत कम लोगों ने कुछ हदीसों के हवाले से तहरीफ की बात की है, लेकिन दोनों फ़िरक़ों के शोधकर्ता इस राय को बिल्कुल से ठुकराते हैं और उन रिवायतों को मन–घड़त ठहराते हैं या उनको माने मतलब से तहरीफ (कुर्आन की आयतों की ग़लत तफसीर) या तफसीरे कुर्आन और कुर्आन के Text में गलत मतलब पर महमूल करते हैं। (ग़ौर कीजिये)

जो कमसमझ लोग इस बात पर ज़ोर दे रहे हैं कि कुछ शीआ या ग़ैर शीआ लोग तहरीफ को मानते हैं हांलाँकि यह बात शीआ और अहलेसुन्नत के बड़े उलमा के खुले बयानों के बिलकुल ख़िलाफ है। ऐसे लोग अन्जाने में कुर्आन को चोट पहुँचा रहे हैं और अपने बेजा तास्सुब (द्वेष) की वजह से इस बड़ी आसमानी किताब को शक में डालने की कोशिश कर रहे हैं और दुश्मन की मदद कर रहे हैं।

पैग़म्बर (स0) के समय से कुर्आन का लगातार जमा किये जाने का इतिहास, इस किताब को लिखने, याद करने और अपने पास रखने पर मुसलमानों में ज़बरदस्त ध्यान, ख़ास तौर से पहले दिन से ही वही लिखने वालों की एक तादाद का होना, इस हक़ीक़त को साफ कर देते हैं कि कुर्आन में तहरीफ एक नामुमकिन बात रही है।

और इस मशहूर जाने–माने कुर्आन के अलावा कोई दूसरा कुर्आन भी मौजूद नहीं है। इसकी दलील भी बिलकुल साफ है और तहक़ीक़ (शोध) का रास्ता सबके लिए खुला है, क्योंकि आज सभी घरों, सभी मस्जिदों और बहुत सी

लाइब्रेरियों में कुर्आन मौजूद है।

यहाँ तक कि सदियों पहले लिखे गए नुस्ख़े (प्रतियाँ) हमारे म्यूज़मों/सग्रहालयों में मौजूद हैं। यह सब डंके की चोट पर एलान कर रहे हैं कि यह वही कुर्आन हैं जो दूसरे इस्लामी मुल्कों में मौजूद हैं। अगर इससे पहले इन रास्तों पर तहक़ीक़ वाले मौजूद न थे तो आज तो तहक़ीक़ का दरवाज़ा सबके लिए खुला है। थोड़ी सी तहक़ीक़ से ही इस तरह की ग़लत बातों को बेबुनियाद होना साबित हो जाएगा।

"فَبَشِّرْ عِبَادِ الَّذِيْنَ يَسْتَمِعُوْنَ الْقَوْلَ فَيَتَّبِعُوْنَ اَحْسَنَهٗ."

[मेरे उन बन्दों को ख़ुशख़बरी दो जो बातें सुनते हैं और उनमें से सबसे अच्छी बात की पैरवी करते (चलते) हैं।] (सूरा 'ज़ुमर' आयत 17–18)

हमारे यहाँ दीनी इल्म के ठिकानों में आज बड़े पैमाने पर कुर्आनी शास्त्रों की तालीम का सिलसिला जारी है। उनका एक बहुत ही अहम सबक़ कुर्आन में तहरीफ़ का न होना है।[1]

27– कुर्आन इंसान की ज़रूरत

हमारा अक़ीदा है कि: इंसान की आध्यात्मिक रूहानी और दुनियावी ज़िन्दगी के लिए ज़रूरी बुनियादी उसूल (मूल सिद्धान्त) कुर्आन में बता दिये गये हैं। इस किताब में हुकूमत और राजनीति को चलाने, दूसरे समाजों से बरताव, आपसी ज़िन्दगी, सुलह व जंग, और अदालती व कारोबारी मामलों वग़ैरा के बुनियादी उसूल और क़ाएदे बयान कर दिये गये हैं। उन पर चलने से ही हमारी ज़िन्दगी रौशन हो जाती है।

---

(1) हमने अपनी किताबों में चाहे वह तफ़सीर की हों या उसूल की, तहरीफ़ न होने की बात की है। (अनवारुल उसूल और तफ़सीर नमूना को देखें)।

"وَنَزَّلْنَا عَلَيْكَ الْكِتَابَ تِبْيَانًا لِّكُلِّ شَيْءٍ وَّهُدًى وَّرَحْمَةً وَّبُشْرٰى لِلْمُسْلِمِيْنَ."

[हमने यह किताब आप पर नाज़िल की जो चीज़ों को बयान करने वाली है और मुसलमानों के लिए हिदायत, रहमत (दया) और खुशख़बरी है।] (सूरा 'नहल' आयत 89)

इसी वजह से हमारा अक़ीदा है कि इस्लाम हरगिज़ हुकूमत और सियासत से अलग नहीं है। इस्लाम मुसलमानों को हुक्म देता है कि वे इस्लामी चलन और मूल्यों को ज़िन्दा करें और इस्लामी समाज उभारें कि सब लोग बराबरी और इंसाफ के रास्ते पर चल पड़े, यहाँ तक कि दोस्त व दुश्मन के मामले में भी बराबर से इंसाफ से काम लें।

"يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا كُوْنُوْا قَوَّامِيْنَ بِالْقِسْطِ شُهَدَآءَ لِلّٰهِ وَلَوْ عَلٰٓى اَنْفُسِكُمْ اَوِ الْوَالِدَيْنِ وَالْاَقْرَبِيْنَ."

[ऐ ईमान लाने वालों मुकम्मल इंसाफ क़ायम करो और खुदा के लिए गवाही दो चाहे (यह गवाही) खुद तुम्हारे या माँ-बाप और रिश्तेदारों के लिए नुक़सान देने वाली हो।] (सूरा 'निसा' आयत 135)

"وَلَا يَجْرِمَنَّكُمْ شَنَاٰنُ قَوْمٍ عَلٰٓى اَلَّا تَعْدِلُوْا اِعْدِلُوْا هُوَ اَقْرَبُ لِلتَّقْوٰى."

[किसी गिरोह की दुश्मनी तुम्हारे लिए गुनाह करने और इंसाफ का दामन छोड़ देने की वजह हरगिज़ न बनने पाए। इंसाफ से काम लो कि यह तक़्वे (संयम) के क़रीब है।] (सूरा 'माएदा' आयत 8)

28- तिलावत (कुर्आन-पाठ), ध्यान, सोच और अमल

हमारा अक़ीदा है कि: कुर्आन की तिलावत बेहतरीन

इबादतों में से एक है। बहुत कम इबादतें इसके बराबर हैं, क्योंकि यह कुर्आन के बारे में ग़ौर व फ़िक्र करने, समझने और नेक कामों का झरना है।

कुर्आन पैग़म्बरे इस्लाम (स0) को मुख़ातब करके कहता है:

"قُـمِ الـلَّيْـلَ اِلَّا قَلِيْلاً، نِصْفَهُ اَوِ انْقُصْ مِنْهُ قَلِيْلاً، اَوْ زِدْ عَلَيْهِ وَرَتِّلِ الْقُرْآنَ تَرْتِيْلاً."

[रात को उठो मगर पूरी रात नहीं, थोड़ी आधी रात या इससे भी कुछ कम कर दो या कुछ ज़्यादा कर दो और कुर्आन को ठहर–ठहर कर ठीक–ठीक पढ़ो।] (सूरा मुज़्ज़म्मिल आयत 2–4)

"فَاقْرَؤُا مَا تَيَسَّرَ مِنَ الْقُرْآنِ."

[जितना हो सके कुर्आन की तिलावत करो।]

(सूरा 'मुज़्ज़म्मिल' आयत 20)

लेकिन जैसा कहा गया तिलावत कुर्आन के माने और मतलब में ग़ौर फ़िक्र और ध्यान की वजह हो। और यह ग़ौर फ़िक्र भी कुर्आन पर चलने की पहल बने:

"اَفَلَا يَتَدَبَّرُوْنَ الْقُرْآنَ اَمْ عَلٰى قُلُوْبٍ اَقْفَالُهَا."

[क्या वे कुर्आन में ग़ौर नहीं करते या उनके दिलों पर ताले पड़े हैं?] (सूरा 'मुहम्मद' आयत 24)

"وَلَقَدْ يَسَّرْنَا الْقُرْآنَ لِلذِّكْرِ فَهَلْ مِنْ مُّدَّكِرٍ."

[हमने कुर्आन को नसीहत के लिए आसान बनाया है तो क्या कोई नसीहत लेने वाला है। (और अमल करने वाला है)?]

(सूरा 'क़मर' आयत 17)

एक और जगह पर इरशाद होता है:

"هٰذَا كِتَابٌ اَنْزَلْنَاهُ مُبَارَكٌ فَاتَّبِعُوْهُ."

[यह बरकत वाली किताब है जिसे हमने (आप पर) नाज़िल किया है इसलिए इसकी पैरवी करो। (इस पर चलो)]

(सूरा 'अनआम' आयत 155)

इसलिए वे लोग जो सिर्फ कुर्आन की तिलावत और उसे याद करके ही बस कर जाते हैं और कुर्आन में ग़ौर फ़िक्र और उस पर अमल से दूर रहते हैं, यूँ तो वे इन तीन बातों में से एक बात को कर लेते हैं लेकिन दो अहम बातों से हाथ धो बैठते हैं। वह बड़े घाटे में हैं।

29– बहकाने वाली बहसें

हमारा अक़ीदा है किः मुसलमानों को कुर्आन की आयतों में ग़ौर फ़िक्र से रोकने के लिए हमेशा शैतानी हाथ काम करते रहे हैं। बनी उमैय्या और बनी अब्बास[1] के ज़माने में कुर्आन के क़दीम या हादिस होने के मसले को छेड़कर मुसलमानों को दो गिरोहों में बाँटा गया और उनको लड़ाया गया जिसके नतीजे में बहुत सी जानें चली हो गईं।

हांलाँकि अब हम जानते हैं कि ये बातें इख़्तेलाफ और झगड़े वाली नहीं हैं क्योंकि अगर अल्लाह के कलाम (वाक) से मुराद ये हर्फ, अक्षर, लिखवट और काग़ज़ हो तो किसी शक के बिना सब हादिस (घटित और मिटने वाले) मामले हैं और अगर इससे मुराद खुदा की जानकारी में मौजूद माने हों तो चूँकि खुदा का इल्म/ज्ञान उसकी ज़ात की तरह क़दीम और

---

(1) इतिहास की कुछ किताबों में लिखा है कि अब्बासी ख़लीफा मामून ने अपने एक क़ाज़ी की मदद से यह हुक्म जारी किया कि जो लोग कुर्आन को मख़लूक़ (पैदा किया हुआ) न समझें उन्हें सरकारी ओहदों से हटा दिया जाए और अदालत में उनकी गवाही भी न सुनी जाए। (तारीख़े जम्ए कुर्आने करीम पे–260)

अज़ली (अनदि अनन्त) है इसलिए यह भी अज़ली है। लेकिन ज़ोर ज़बरदस्ती करने वाले राजाओं और ज़ालिम ख़लीफ़ाओं ने लोगों को सालों साल इस मसले में उलझाए रखा। अब कुछ और छुपे हुए हाथ मुसलमानों को दूसरे तरीक़ों से कुर्आन में ग़ौर फ़िक्र और उस पर चलने से रोक रहे हैं।

20– तफ़सीर (कुर्आन–व्याख्या) के उसूल व क़ाएदे

हमारा अक़ीदा है कि: कुर्आनी लफ़्ज़ों/शब्दों के जाने माने और शब्दकोष (Dictionary) वाले माने मतलब निकालना चाहिए मगर यह कि किसी दूसरे माने मतलब पर आयतों के अन्दर या बाहर कोई अक़ली या नक़ली दलील हो। लेकिन शक वाली दलीलों का सहारा लेने से बचा जाए। मन के झुकाव और मनमानी से कुर्आन की तफ़सीर न की जाए।

जैसे, कुर्आन जब यह कहता है कि:

"وَمَنْ كَانَ فِي هٰذِهٖ اَعْمٰى فَهُوَ فِي الْاٰخِرَةِ اَعْمٰى."

[जो इस दुनिया में अंधा होगा आख़िरत में भी अंधा ही होगा।] (सूरा 'असरा' आयत 72)

तो हमें यक़ीन है कि यहाँ "اَعْمٰى" से मुराद ज़ाहिरी अंधा नही है जो Dictionaryमें अअ्मा के माने है, क्योंकि बहुत से नेक और पाक लोग देखने में अंधे थे, बल्कि इसके माने अन्दर का और मन का अंधापन है। यहाँ पर अक़्ल से यह मतलब निकलता है।

इसी तरह कुर्आन कुछ इस्लाम दुश्मन लोगों के बारे में कहता है:

"صُمٌّ بُكْمٌ عُمْيٌ فَهُمْ لَا يَعْقِلُوْنَ."

[वे बहरे, गूँगे और अंधे हैं इसी वजह से कोई बात नहीं समझते।] (सूरा 'बक़रा' आयत 171)

यह बात साफ है कि वे देखने में बहरे, गूँगे और अंधे नहीं थे बल्कि यह उनकी अन्दरूनी ख़राबियाँ थीं (हमने यह तफसीर उन बातों की वजह से की जो हमारे सामने मौजूद हैं।)

इस बुनियाद पर कुर्आन जब खुदा के बारे में यह कहता है:

"بَلْ يَدَاهُ مَبْسُوطَتَانِ"

[खुदा के दोनों हाथ खुले हैं।] (सूरा 'माएदा' आयत 64)

या यह फरमाता है:

"وَاصْنَعِ الْفُلْكَ بِأَعْيُنِنَا"

[ऐ नूह हमारी आँखों के सामने कश्ती बना।]

(सूरा 'हूद' आयत 37)

तो इन आयतों का मतलब यह बिलकुल नहीं है कि खुदा जिस्म वाला है और कान, आँख और हाथ वग़ैरा रखता है, क्योंकि हर जिस्म ऐसे हिस्सों (अंगों) से बनता है और उसे समय, जगह और दिशा की ज़रूरत होती है। और आख़िरकार ख़त्म हो जाता है। हांलाँकि खुदा इन बातों से परे है। इसलिए "يَدَاهُ" (उसके दोनों हाथ) से मुराद खुदा की वही भरपूर कुदरत है जिसने काएनात (ब्रहमाण्ड/Universe) को अपने क़ब्ज़े में ले रखा है और "اعين" (आँखों) से मुराद सभी चीज़ों के बारे में उसका जान लेना है।

इसलिए हम मज़कूरा दिये गये लफ्ज़ों (चाहे वह खुदा की ख़ूबियों के मुताल्लिक़ हों या कुछ और हों) से चिमट कर अक़्ली और लिखी/बताई हुई बातों से आँख चुराने को ठीक

नहीं समझते, क्योंकि दुनिया के सभी ज़बान वाले इस तरह की कहावतों और मुहावरों का सहारा लेते हैं। कुर्आन ने भी यह तरीक़ा अपनाया है:

"وَمَآ اَرْسَلْنَا مِنْ رَّسُوْلٍ اِلَّا بِلِسَانِ قَوْمِهٖ."

[हमने हर रसूल को उसकी क़ौम की ज़बान के साथ भेजा है।] (सूरा 'इब्राहीम' आयत 4)

लेकिन जैसे पहले बताया गया है इन क़रीनों का क़तअी और साफ होना ज़रूरी है।

31– अपनी राय से तफसीर करने के ख़तरे।

हमारा अक़ीदा है कि: अपनी राय से तफसीर करना कुर्आन मजीद के ख़िलाफ एक बहुत ही ख़तरनाक मन्सूबा है। हदीसों में इसकी गिन्ती गुनाहे कबीरा (बड़ा गुनाह) में की गई है। यह खुदा की बारगाह से धुतकारे जाने की वजह है। हदीस में आया है कि खुदा फरमाता है:

"مَا آمَنَ بِیْ مَنْ فَسَّرَ بِرَایِه کَلَامِیْ."

[जो शख़्स मेरे कलाम (कथन) की तफसीर अपनी मर्ज़ी (अपनी चाहत) से करे वह मुझ पर ईमान नहीं लाया।]

(वसाएलुश्शीआ जि–18 पे–28 ह–22)

यह बात साफ है कि अगर वह सही तौर पर ईमान ला चुका होता खुदा के कलाम को उसी तरह क़बूल करता जिस तरह वह है न कि अपनी मनमानी से और मन चाहे तरह से।

बहुत सी मशहूर किताबों जैसे सही तिरमिज़ी, निसाई, अबुदाऊद वग़ैरा में हमारे नबी (स0) की यह हदीस

आई है:

"مَـنْ قَـالَ فِى الْقُرْآنِ بِرَايِهٖ اَوْ بِمَا لَا يَعْلَمُ فَلْيَتَبَوَّءْ مَقْعَدَهٗ مِنَ النَّارِ."

[जो कुर्आन की तफसीर अपनी राय से करे या उसके मुताल्लिक़ बग़ैर इल्म के कोई बात कहे तो वह अपना ठिकाना जहन्नम में बना ले।][1]

अपनी राय से तफसीर करने का मतलब यह है कि आदमी अपने निजी ख़यालों और किसी के या किसी गिरोह के अक़ीदे के हिसाब से कुर्आन के माने निकाले और कुर्आन को उन पर ढाल दे जबकि इस मतलब पर कोई मिसाल या नमूना मौजूद न हो। ऐसा आदमी हक़ीक़त में कुर्आन का मानने वाला और उस पर चलने वाला नहीं है बल्कि कुर्आन से अपनी मनवाना चाहता है। अगर वह कुर्आन पर पूरा-पूरा ईमान रखता तो इस तरह का काम हरगिज़ न करता।

अगर कुर्आन के सिलसिले में अपनी राय और मनमानी का दरवाज़ा खुल जाए तो यह बात पक्की है कि कुर्आन मजीद का एतेबार उठ जायगा और हर कोई अपनी मर्ज़ी के हिसाब से उसके माने मतलब निकालेगा। और हर ग़लत अक़ीदे को कुर्आन पर डाल देगा।

इसलिए अपनी राय से तफसीर का मतलब लुग़त (Dictionary/शब्दकोष) वाले माने, अरब साहित्य और अरबी ज़बान वालों के आम मुहावरें, कहावतें और ज़बान समझने के मेयारों/मानकों से अलग हटकर कुर्आन की तफसीर करना

---

(1) मबाहिस फी उलूमिल कुर्आन पे-304। यह किताब रियाज़ के मशहूर आलिम मनाअिल ख़लीलुल क़तान की लिखी हुई है।

और उसको अपने ग़लत ख़यालों और निजी चाहतों पर ढाल देना। यह हक़ीक़त में कुर्आन में माने की तहरीफ है।

अपनी राय से तफसीर की अलग-अलग तरीके हैं। उनमें से एक कुर्आनी आयतों के सिलसिले में पसन्द और चुनाव का रवैय्या अपनाना है। वह यूँ कि (मिसाल के तौर) पर सिफारिश, तौहीद और इमामत जैसे विषय में सिर्फ उन आयतों को ले और उनके पीछे पड़ जाए जो पहले से तय किये हुए अक़ीदे पर पूरी उतरती हो और उन आयतों से (जो उसकी सोच और मत से मेल नहीं खातीं लेकिन दूसरी आयतों की तफसीर कर सकती हैं) आँख चुराए या उन पर ध्यान ही न दे।

मुख़्सर यह कि जिस तरह कुर्आन मजीद के ज़ाहिरी लफ़्ज़ से चिमटकर अक़्ल के लिखे/बताए हुए, माने हुए ढब व नक़ली तरीक़ों की अनदेखी कर देना एक तरह का बहकावा और टेढ़ापन है। इसी तरह अपनी राय से तफसीर भी एक बहकावा और टेढ़ापन है। ये दोनों चीज़ें कुर्आन की ऊँची शिक्षाओं और उसके मूल्यों से दूरी की वजह बनती हैं।

(ग़ौर कीजिये)

32- सुन्नत का सोता (मूल स्रोत) अल्लाह की किताब है

हमारा अक़ीदा है कि: कोई "كَفَانَا كِتَابُ اللّٰهِ" (हमारे लिए कुर्आन काफी है।) नहीं कह सकता और हदीस व नबी (स0) की सुन्नत (जो कुर्आनी सच्चाईयों की तशरीह, कुर्आन के नासिख़ व मन्सूख़ और ख़ास व आम के समझ के बारे में हैं या उसूल व फुरूअ दीन के सिलसिले में इस्लाम की शिक्षाओं को बयान करती हैं) की अनदेखी नहीं कर सकता,

क्योंकि कुर्आनी आयतों ने पैग़म्बरे अकरम (स0) की सुन्नत और उनके कथन व चलन को मुसलमानों के लिए दलील ठहराया और उन्हें इस्लाम और हुक्मों/धर्मादेशों के निकालने और जानने का असली स्रोत या आधार ठहराया है। इरशाद होता है:

"وَمَا آتٰكُمُ الرَّسُوْلُ فَخُذُوْهُ وَمَا نَهٰكُمْ عَنْهُ فَانْتَهُوْا."

[रसूल ने जो कुछ तुम्हें दिया है (और तुम्हें उस काम का हुक्म दिया है) उसे ले लो (उस पर चलो) और जिस चीज़ से उसने रोका है उस से रुक जाओ।] (सूरा 'हश्र' आयत 7)

एक और जगह इरशाद होता है कि:

"وَمَا كَانَ لِمُؤْمِنٍ وَّلَا مُؤْمِنَةٍ اِذَا قَضَى اللّٰهُ وَرَسُوْلُهٗ اَمْرًا اَنْ يَّكُوْنَ لَهُمُ الْخِيَرَةُ مِنْ اَمْرِهِمْ وَمَنْ يَّعْصِ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ فَقَدْ ضَلَّ ضَلٰلًا مُّبِيْنًا."

[जब अल्लाह और रसूल किसी चीज़ का हुक्म दें तो किसी मोमिन मर्द और औरत को यह हक़ नहीं है कि वह अपनी मर्ज़ी पर अमल करें (चले)। जो भी ख़ुदा और उसके रसूल की नाफ़रमानी (कहा न मानना) करे वह खुली गुमराही का शिकार हुआ है।]

(सूरा 'अह्ज़ाब' आयत 36)

जो लोग रसूल (स0) की सुन्नत की परवाह नहीं करते, हक़ीक़त में वे कुर्आन की परवाह नहीं करते। लेकिन यह बात साफ है कि सुन्नत का सही ज़रिए से साबित होना ज़रूरी है। यह नहीं हो सकता कि कोई भी शख़्स जो कोई बांत कहे और उसे आप (स0) की बताए उसे आनाकानी के बिना चुपचाप मान लिया जाए।

इमाम हज़रत अली (अ0) फ़रमाते हैं कि:

"وَلَقَدْ كُذِّبَ عَلٰى رَسُولِ اللّٰهِ حَتّٰى قَامَ خَطِيْبًا فَقَالَ: مَنْ كَذَبَ عَلَيَّ مُتَعَمِّدًا فَلْيَتَبَوَّأْ مَقْعَدَهُ مِنَ النَّارِ."

[आप (स0) के समय में आपकी ओर झूठी बातें लगाई गईं, यहाँ तक कि आप ने खड़े होकर ख़ुतबा (भाषण) दिया और फ़रमाया: जो भी जान बूझ कर मेरी तरफ़ झूठी बात लगाये उसे जहन्नम में अपने ठिकाने के लिए तैयार रहना चाहिए।] (नहजुलबलाग़ा ख़ुतबा 210)

इसी से मिलती जुलती रिवायत सही बुख़ारी में भी आई है। (सही बुख़ारी जि-1 पे-38 बाब इस्मु मन कज़ब अलन्नबी स0)

33- अहलेबैत (अ0) के इमामों की सुन्नत

यह भी हमारा अक़ीदा है कि: पैग़म्बर (स0) के हुक्म से अहलेबैत (स0) के इमामों (अ0) की हदीसों को मानना और उन पर चलना भी वाजिब है। क्योंकि एक तो यह कि दोनों फ़िरक़ों की मशहूर व जानी मानी हदीस की किताबों में लगातार दुहराई एक हदीस बयान हुई है जो इस बात को खुले तौर पर बयान करती है। सही तिरमिज़ी में आया है कि पैग़म्बर (स0) ने फ़रमाया कि:

"يَآ اَيُّهَا النَّاسُ اِنِّيْ قَدْ تَرَكْتُ فِيْكُمْ مَا اِنْ اَخَذْتُمْ بِهٖ لَنْ تَضِلُّوْا كِتَابَ اللّٰهِ وَعِتْرَتِيْ اَهْلَ بَيْتِيْ."

[ऐ लोगों मैं तुम्हारे बीच वह चीज़ छोड़ रहा हूँ जिससे चिमटे रहोगे तो हरगिज़ कभी न बहकोगे, वह अल्लाह की किताब और मेरी इतरत (यानि अहलेबैत अ0) है।][1]

---

(1) सही तिरमिज़ी, जि-5 पे-662 बाब मनाक़िब अहलेबैत (अ0), ह-3786। इस हदीस की कई सनदों का इमामत की बहस में तफ़सील से बयान होगा।



दूसरे यह कि अहलेबैत (अ0) के इमामों ने अपनी सभी हदीसें पैग़म्बर (स0) से रिवायत की हैं और फरमाया है कि हम जो कहते हैं वह हमारे बाप–दादा के ज़रिए पैग़म्बरे अकरम (स0) से हम तक पहुँचा है।

हाँ पैग़म्बरे अकरम (अ0) मुसलमानों के मुस्तक़बिल (भविष्य) और उनकी कठिनाइयों को अच्छी तरह देख रहे थे। इसलिए आप (स0) ने कुर्आन और इमामों की बात पर चलने को रहती दुनिया तक उनकी आए दिन की कठिनाइयों का हल बताया।

क्या इतनी अहम, माने दार हदीस की अनदेखी की जा सकती है और बड़े आराम से इससे नज़रें चुराई जा सकती हैं?

हमारा अक़ीदा है किः अगर इस बात पर और ज़्यादा ध्यान दिया जाता तो आज के मुसलमान अक़ीदों, तफसीर और फिक़ही (धर्मविधि शास्त्रीय) मसलों में जिन कठिनाइयों का सामना कर रहे हैं उनमें से कोई एक कठिनाई मौजूद न होतीं।



चौथा चैप्टर

चौथा चैप्टर

क़यामत: मौत के बाद की दूसरी ज़िन्दगी

34- क़यामत के बिना ज़िन्दगी का कोई मक़सद नहीं

हमारा अक़ीदा है कि: मौत के बाद सभी इंसान एक दिन फिर ज़िन्दा होंगे और उनके आमाल (कर्मों) का हिसाब होगा। नेक और अच्छे काम करने वाले लोग हमेशा रहने वाली जन्नत में जाएँगे, जबकि पापी और बुरे लोग जहन्नम में भेज दिये जाएँगे।

इरशाद होता है:

"اَللّٰهُ لَا اِلٰـهَ اِلَّا هُوَ لَيَجْمَعَنَّكُمْ اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ لَا رَيْبَ فِيْهِ."

[ख़ुदा के सिवा कोई ईश्वर नहीं है। यक़ीनन वह तुम सबको क़यामत के दिन जमा करेगा जिसमें कोई शक नहीं है।]

(सूरा 'निसा' आयत 87)

एक और जगह इरशाद होता है:

"فَـاَمَّـا مَـنْ طَـغٰـى، وَاٰثَـرَ الْـحَـيٰـوةَ الدُّنْيَا، فَاِنَّ الْجَحِيْمَ هِيَ الْمَاْوٰى، وَاَمَّا مَنْ خَافَ مَقَامَ رَبِّهٖ وَنَهَى النَّفْسَ عَنِ الْهَوٰى، فَاِنَّ الْجَنَّةَ هِيَ الْمَاْوٰى."

[अलबत्ता वह कि जिसने सरकशी की (सर उठाया) और दुनिया की ज़िन्दगी को तरजीह दी, यक़ीनन उसका ठिकाना जहन्नम है और जो अपने पालने वाले के मक़ाम (इंसाफ) से डरे और अपने नफ़्स (जान) को ख़ाँहिशों से रोके यक़ीनन उसका ठिकाना जन्नत

है।] (सूरा 'नाज़िआत' आयत 37–41)

हमारा अक़ीदा है कि: हक़ीक़त में दुनिया एक पुल है जिसे पार कर इंसान सदा रहने वाली दुनिया में जाता है। दूसरे लफ़्ज़ों में यह दुनिया आख़िरत के लिए एक युनिवर्सिटी या कारोबार और व्यापार का बाज़ार या खेती है।

हज़रत अली (अ0) दुनिया के बारे में इरशाद फरमाते हैं:

"اِنَّ الدُّنْيَا دَارُ صِدْقٍ لِمَنْ صَدَقَهَا.....وَدَارُ غِنًى لِمَنْ تَزَوَّدَ مِنْهَا، وَدَارُ مَوْعِظَةٍ لِمَنْ اتَّعَظَ بِهَا، مَسْجِدُ اَحِبَّاءِ اللّٰهِ وَمُصَلّٰى مَلَائِكَةِ اللّٰهِ وَمَهْبِطُ وَحْيِ اللّٰهِ وَمَتْجَرُ اَوْلِيَاءِ اللّٰهِ.

[दुनिया इस शख़्स के लिए सदाक़त और सच्चाई की जगह है जो उसके साथ सच्चाई बरते, और बेपरवाही की जगह है उसके लिए जो इससे रास्ते का सामान जमा करे, और जागने व होशियारी की जगह है उसके लिए जो इससे नसीहत सबक़ ले। यह ख़ुदा के दोस्तों के लिए मस्जिद है, ख़ुदा के फरिश्तों के लिए नमाज़ पढ़ने की जगह है, अल्लाह की वही उतरने की जगह है और अल्लाह के वलियों के लिए एक तिजारत की जगह है।] (नहजुलबलाग़ा कलमाते क़िसार न0 131)

35– क़यामत की दलीलें साफ और खुली हुई हैं

हमारा अक़ीदा है कि: क़यामत की दलीलें बहुत साफ हैं क्योंकि:

1– इस दुनिया की ज़िन्दगी यह बताती है कि दुनिया इंसान के जन्म का आख़री मक़सद नहीं हो सकता, कि वह कुछ दिनों के लिए आए, हज़ारों कठिनाइयों में ज़िन्दगी बिताए और इसके बाद सब कुछ ख़त्म हो जाए और वह मिट

जाने वाला मुसाफिर बन जाए।

"اَفَحَسِبْتُمْ اَنَّمَا خَلَقْنٰكُمْ عَبَثًا وَّاَنَّكُمْ اِلَيْنَا لَاتُرْجَعُوْنَ."

[क्या तुम यह सोंचा है कि हमने तुम्हें बेमक़सद पैदा किया और तुम्हें हमारी तरफ पलटकर नहीं आना?] (सूरा 'मोमिनून' आयत 115)

यह इस बात की तरफ इशारा है कि अगर क़यामत न होती तो दुनिया की ज़िन्दगी बेमक़सद और बेकार होती।

2– ख़ुदा के इंसान की माँग यह है कि नेक और बुरे लोग जो इस दुनिया में एक साथ हैं और मिले जुले हुए हैं बल्कि कभी तो बुरे आगे निकल जाते हैं, एक दूसरे से अलग हों और हर एक को अपने–अपने आमाल (कामों) का बदला और सज़ा मिल सके।

"اَمْ حَسِبَ الَّذِيْنَ اجْتَرَحُوْا السَّيِّئَاتِ اَنْ نَّجْعَلَهُمْ كَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوْا الصَّالِحَاتِ سَوَاءً مَّحْيَاهُمْ وَمَمَاتُهُمْ سَاءَ مَا يَحْكُمُوْنَ."

[जो लोग गुनाह करने वाले हुए हैं क्या वे यह सोंचते हैं कि हम उनको उन लोगों की तरह मान लेंगे जो ईमान लाए और अच्छे काम करते हैं? और उनकी ज़िन्दगी और मौत एक जैसी होगी? वे कितना बुरा फैसला करते हैं।] (सूरा 'जासिया' आयत 21)

3– ख़ुदा की अथाह रहमत यह चाहती है कि उसकी मेहरबानी भलाई और नेअमत का सिलसिला इंसान की मौत पर ख़त्म न हो, बल्कि अच्छाइयों वाले और अहल लोगों के बढ़ावे का सिलसिला आगे बढ़ता रहे।

"كَتَبَ عَلٰى نَفْسِهِ الرَّحْمَةَ لَيَجْمَعَنَّكُمْ اِلٰى يَوْمِ الْقِيَامَةِ لَا رَيْبَ فِيْهِ."

[ख़ुदा ने अपने ऊपर रहमत को फ़र्ज़ किया है। वह तुम सबको ज़रूर-ज़रूर क़यामत के दिन जमा करेगा जिसमें कोई शक नहीं है।] (सूरा 'अनआम' आयत 12)

जो लोग क़यामत के सिलसिले में शक व शुब्हे में थे कुर्आन उनसे कहता है: यह कैसे हो सकता है कि मुर्दों को ज़िन्दा करने के सिलसिले में तुम ख़ुदा की क़ुदरत में शक करो, हांलाँकि तुम्हें पहली बार भी उसी ने पैदा किया है। जिसनें तुम्हें पहली बार मिट्टी से पैदा किया है वही तुम्हें एक बार फिर दूसरी ज़िन्दगी की तरफ पलटाएगा।

"اَفَعَيِيْنَا بِالْخَلْقِ الْاَوَّلِ بَلْ هُمْ فِي لَبْسٍ مِّنْ خَلْقٍ جَدِيْدٍ."

[क्या हम पहली पैदाईश से थक गए (जो क़यामत की पैदाईश पर ताक़त न रखते हों)? लेकिन वह (इन खुली दलीलों के बाद भी) नई पैदाईश के बारे में शक करते हैं।] (सूरा 'क़ाफ' आयत 15)

एक और जगह इरशाद होता है:

"وَضَرَبَ لَنَا مَثَلًا وَّنَسِيَ خَلْقَهٗ قَالَ مَنْ يُّحْيِيَ الْعِظَامَ وَهِيَ رَمِيْمٌ، قُلْ يُحْيِيْهَا الَّذِيْٓ اَنْشَاَهَآ اَوَّلَ مَرَّةٍ وَهُوَ بِكُلِّ خَلْقٍ عَلِيْمٌ."

[उसने हमारे लिए एक मिसाल (कहावत) बनाई। लेकिन अपनी पैदाईश को भुला बैठा और कहा कौन इन सड़ी-गली हड्डियों को ज़िन्दा करेगा? कहो कि जिसने उसे पहली बार पैदा किया है वह उन्हें दोबारा ज़िन्दा करेगा और वह हर पैदा हुए के बारे में जानकारी रखता है।] (सूरा 'यासीन' आयत 78-79)

फिर ज़मीन और आसमान की पैदाईश को देखते हुए क्या कोई बड़ी बात है? जो यह क़ुदरत रखता है कि इतनी बड़ी और ताज्जुब भरी काएनात को पैदा कर सके वह यह

ताक़त भी रखता है कि मौत के बाद मुर्दों को ज़िन्दा कर दे।

"اَوَلَمْ يَرَوْا اَنَّ اللّٰهَ الَّذِىْ خَلَقَ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ وَلَمْ يَعْىَ بِخَلْقِهِنَّ بِقَادِرٍ عَلٰى اَنْ يُّحْىِ الْمَوْتٰى بَلٰى اِنَّهٗ عَلٰى كُلِّ شَىْءٍ قَدِيْرٌ."

[क्या वे नहीं जानते कि जिस ख़ुदा ने ज़मीन और आसमानों को पैदा किया है और जो उनकी पैदाईश से बेबस नहीं हुआ, वह इस बात पर कुदरत रखता है कि मुर्दों को ज़िन्दा करे? हाँ वह हर चीज़ पर कुदरत रखता है।] (सूरा 'अह्क़ाफ़' आयत 34)

36– जिस्मानी (शारीरिक) क़यामत

हमारा अक़ीदा है कि: न सिर्फ इंसान की रूह बल्कि जिस्म और रूह दोनों ही दूसरी दुनिया में जाएँगे और एक नई ज़िन्दगी शुरु होगी। क्योंकि इस दुनिया में जो कुछ किया था वह उसी रूह और बदन के ज़रिए किया था, इसलिए सज़ा और इनाम भी दोनों को मिलना चाहिए।

कुर्आन मजीद में क़यामत के बारे में बहुत सी आयतों में "जिस्मानी क़यामत" की बात की गई है और मुख़ालिफों के इस ताज्जुब का कि सड़ी–गली हड्डियाँ कैसे नई ज़िन्दगी पायेंगी, कुर्आन ने यह जवाब दिया है:

"قُلْ يُحْيِيْهَا الَّذِىْ اَنْشَاَهَا اَوَّلَ مَرَّةٍ."

[जिसने इंसान को पहली बार मिट्टी से पैदा किया है वह इस तरह के काम की कुदरत रखता है।] (सूरा 'यूनुस' आयत 79)

"اَيَحْسَبُ الْاِنْسَانُ اَنْ لَّنْ نَّجْمَعَ عِظَامَهٗ، بَلٰى قَادِرِيْنَ عَلٰى اَنْ نُّسَوِّىَ بَنَانَهٗ"

[क्या इंसान यह सोचता है कि हम उसकी (सड़ी–गली) हड्डियों को जमा (और ज़िन्दा) नहीं कर पाएँगे? हाँ हम ताक़त रखते

हैं उसकी (उंगलियों के) पोरों को भी बराबर कर दें (और पहली हालत में पलटा दें)।] (सूरा 'क़यामा' आयत 3–4)

यह आयतें और इनकी तरह की दूसरी आयतें जिस्म/शरीर को पलटाने की साफ़–साफ़ बात करती हैं।

वह आयतें जो यह कहती हैं कि तुम्हें तुम्हारी क़ब्रों से उठाया जाएगा, वह भी खुले तौर पर जिस्मानी क़यामत पर दलील दे रही हैं।[1]

क़ुर्आन में क़यामत में बहुत सी आयतें रूह और जिस्म दोनों के पलटाने की बात बयान करती हैं।

37– मौत के बाद की अजीब दुनिया

हमारा अक़ीदा है किः मौत के बाद क़यामत और फिर जन्नत जहन्नम के सिलसिले में जो कुछ सामने आएगा उसकी बड़ाई का अन्दाज़ा हम इस सिमटी हुई दुनिया में नहीं लगा सकते। अल्लाह का इरशाद हैः

"فَلَا تَعْلَمُ نَفْسٌ مَّآ اُخْفِيَ لَهُمْ مِنْ قُرَّةِ اَعْيُنٍ"

[कोई नहीं जानता, उन (नेक लोगों) के लिए कैसी नेमतें रखी गई हैं जो उनकी आँखों के लिए ठण्डक की वजह हैं।]

(सूरा 'सजदा' आयत 17)

रसूले अकरम (स0) की एक बहुत ही मशहूर हदीस में आया हैः

"اِنَّ اللّٰهَ يَقُوْلُ اَعْدَدْتُ لِعِبَادِيَ الصَّالِحِيْنَ مَالَا عَيْنٌ رَأَتْ وَلَا اُذُنٌ سَمِعَتْ وَلَا خَطَرٌ عَلٰى قَلْبِ بَشَرٍ."

---

(1) जैसे सूरा 'यासीन' की आयत नम्बर 51 व 52, सूरा 'क़मर' की आयत 7 और सूरा 'मआरिज' की आयत 43।

[ख़ुदा ने फरमाया कि मैं ने अपने नेक बन्दों के लिए ऐसी नेमतें (भलाइयाँ) तैयार कर रखी हैं कि जिन्हें किसी आँख ने नहीं देखा, किसी कान ने नहीं सुना और किसी इंसान के दिल में उनका ख़याल तक नहीं आया।][1]

अगर मान लें कि माँ के पेट की घिरी हुई दुनिया में रह रहा कोई बच्चा होश व अक़ल भी रखता तो वह माँ के पेट के बाहर की दुनिया और उसकी सच्चाईयों, जैसे चमकता सूरज और चाँद, सुब्ह की हवा के चलने, फूलों के मन्ज़र और समन्दर की लहरों की आवाज़ को हरगिज़ नहीं समझ सकता। क़यामत के मुक़ाबले में दुनिया की मिसाल वैसी ही है जैसी माँ के पेट के बच्चे के लिए बाहर की दुनिया। (इस पर ग़ौर कीजिये)

38– क़यामत और आमाल नामा

हमारा अक़ीदा है कि: वह आमाल नामे (कामों का लेख–जोखा) जो हमारे कामों को बतलाएँगे उस दिन हमारे हाथ में दिये जाएँगे। नेक लोगों का आमाल नामा उनके दायें हाथ में जबकि बुरे लोगों का आमाल नामा उनके बायें हाथ में दिया जायेगा। नेक और मोमिन लोग अपना आमाल नामा देख कर ख़ुश होंगे जबकि बुरे लोग अपना आमाल नामा देखकर बहुत दुखी और परेशान होंगे। क़ुर्आन ने भी यह बयान फरमाया है:

"فَاَمَّا مَنْ اُوْتِیَ كِتَابَهٗ بِیَمِیْنِهٖ فَیَقُوْلُ هَآؤُمُ اقْرَؤُا كِتَابِیَهْ، اِنِّی

---

(1) जाने माने मुहद्दिस (हदीस–शास्त्र के जानकार व लेखक) जैसे बुख़ारी व मुस्लिम और मशहूर मुफस्सिरीन तबरसी, आलूसी और क़ुरतुबी ने यह हदीस अपनी किताबों में नक़ल की (दुहराई) है।

ظَــنَنْتُ اَنِّی مُلٰقٍ حِسَابِیَهْ، فَهُوَ فِی عِیْشَةٍ الرَّاضِیَةٍ .... وَاَمَّا مَنْ اُوْتِیَ کِتَابَهٗ بِشِـمَالِهٖ فَیَقُوْلُ یَا لَیْتَنِیْ لَمْ اُوْتَ کِتَابِیَهْ."

[वह शख़्स जिसका का आमाल नामा उसके दाएँ हाथ में दिया जाएगा (वह ख़ुशी से) पुकारे गा कि (ऐ महशर वालों) मेरा अमाल नामा पकड़कर पढ़ों। मुझे यक़ीन था कि मैं अपने आमाल नामे का नतीजा पाऊँगा। वह एक पसन्दीदा ज़िन्दगी गुज़ारेगा। लेकिन जिस शख़्स का आमाल नामा उसके बाएँ हाथ में दिया जाएगा, वह कहेगा कि ऐ काश! मेरा आमाल नामा मुझे न दिया जाता।]

(सूरा 'अलहाक़्क़' आयत 19-25)

अलबत्ता यह बात साफ नहीं है कि आमाल नामा क्या है और किस तरह लिखा जाता है, जो इसके अन्दर लिखी हुई बातों को कोई शख़्स झुठला नहीं सकेगा। इसलिए पहले भी इशारा किया जा चुका है कि मआद और क़यामत की कुछ ऐसी ख़ूबियाँ और हिस्से हैं जिनका समझना दुनिया के लोगों के लिए मुश्किल या नामुमकिन है। अलबत्ता क़यामत के बारे में मोटी-मोटी बातें सबको मालूम हैं और इन से इन्कार नहीं किया जा सकता।

39- क़यामत के गवाह

हमारा अक़ीदा है: क़यामत के दिन अलावा इसके कि अल्लाह ख़ुदा हमारे कामों पर गवाह और शाहिद है, कुछ दूसरे गवाह भी हमारे कामों पर गवाही देंगें। हमारे हाथ और पैर यहाँ तक कि हमारे बदन की खाल और वह ज़मीन जिस पर हम रह रहे हैं, इसके अलावा दूसरी सभी चीज़ें हमारे कामों की गवाह हैं।

"اَلْیَوْمَ نَخْتِمُ عَلٰی اَفْوَاهِهِمْ وَتُکَلِّمُنَا اَیْدِیْهِمْ وَتَشْهَدُ اَرْجُلُهُمْ بِمَا کَانُوْا یَکْسِبُوْنَ."

[हम आज (क़यामत के दिन) उनके मुँह पर मुहर लगा देंगे और उनके हाथ हमारे साथ बात-चीत करेंगे और उनके पाँव उनके कामों की गवाही देंगे।] (सूरा 'यासीन' आयत 65)

"وَقَالُوْا لِجُلُوْدِهِمْ لِمَ شَهِدْتُّمْ عَلَیْنَا قَالُوْٓا اَنْطَقَنَا اللّٰهُ الَّذِیْ اَنْطَقَ کُلَّ شَیْءٍ."

[वे अपने बदन की चमड़ियों से कहेंगे तुमने हमारे ख़िलाफ़ क्यों गवाही दी? वह जवाब में कहेंगेः जिस ख़ुदा ने हर चीज़ को बोली दी है उसने हमें बोली दी। (और तुम्हारे कामों से पर्दा हटाने की ज़िम्मेदारी हमें सौंपी है)।] (सूरा 'फ़ुस्सिलत' आयत 2)

"یَوْمَئِذٍ تُحَدِّثُ اَخْبَارَهَا، بِاَنَّ رَبَّکَ اَوْحٰی لَهَا."

[उस दिन ज़मीन अपनी ख़बरें बता देगी क्योंकि तेरे पालने वाले ने उस पर वही की है (कि यह ज़िम्मेवारी पूरी करे)।]

(सूरा 'ज़िलज़ाल' आयत 4-5)

40- पुलसिरात और मीज़ाने अमल

हम क़यामत के दिन पुलसिरात और मीज़ान के होने पर ईमान रखते हैं।

सिरात वही पुल है जो जहन्नम के ऊपर से गुज़रता है और सबको उसे पार करना होगा। हाँ जन्नत का रास्ता जहन्नम के ऊपर से गुज़रता है।

"وَاِنْ مِّنْکُمْ اِلَّا وَارِدُهَا کَانَ عَلٰی رَبِّکَ حَتْمًا مَّقْضِیًّا، ثُمَّ نُنَجِّی الَّذِیْنَ اتَّقَوْا وَنَذَرُ الظّٰلِمِیْنَ فِیْهَا جِثِیًّا."

[तुम सबके सब जहन्नम के पास जाओगे। यह तुम्हारे पालने वाले का यक़ीनी और आख़री फ़ैसला है। इसके बाद मुत्तक़ी लोगों को हम इससे नजात देंगे और ज़ालिमों (ग़लत करने वालों) को उसके अन्दर पैरों के बल गिरा हुआ छोड़ देंगे।] (सूरा 'मरियम' आयत 71-72)

इस भयानक और मुश्किल रास्ते से गुज़रना हमारे कामों से जुड़ा है। एक मशहूर हदीस यूँ है:

"مِنْهُمْ مَنْ يَمُرُّ مِثْلَ الْبَرْقِ، وَمِنْهُمْ مَنْ يَمُرُّ عَدوَ الْفَرَسِ، وَمِنْهُمْ مَنْ يَمُرُّ حَبْواً، وَمِنْهُمْ مَنْ يَمُرُّ مُتَعَلِّقاً، قَدْ تَأْخُذُ النَّارُ مِنْهُ شَيْئاً وَتَتْرُكُ شَيْئًا."

[कुछ लोग बिजली की तरह इससे गुज़र जाएँगे, कुछ घोड़े की सी तेज़ी के साथ, कुछ हाथों और घुटनों के बल, कुछ पैदल चलने वालों की तरह और कुछ उससे लटक कर चलेंगें। कभी जहन्नम की आग उनसे कुछ चीज़ें ले लेगी और कुछ चीज़ें छोड़ देगी।][1]

''मीज़ान'' जैसा कि उसके नाम से साफ है इंसानों के आमाल जाँचने का एक तराज़ू है। हाँ उस दिन हमारे तमाम कामों का हिसाब लिया जायेगा और हर काम के वज़न की क़ीमत का अन्दाज़ा हो जाएगा।

"وَنَضَعُ الْمَوَازِيْنَ الْقِسْطَ لِيَومِ الْقِيٰمَةِ فَلَا تُظْلَمُ نَفْسٌ شَيْئًا وَإِنْ كَانَ مِثْقَالَ حَبَّةٍ مِّنْ خَرْدَلٍ اَتَيْنَا بِهَا وَكَفٰى بِنَا حَاسِبِيْنَ."

---

(1) यह हदीस मामूली से फ़र्क़ के साथ दोनों फ़िरक़ों की किताबों में आई है जैसे 'कन्ज़ुल उम्माल' हदीस, 39036 और क़ुरतुबी जि-6 पे-4175 (सूरा 'मरियम' की आयत 71 के ज़ेल में), और शैख़ सदूक़ ने अपनी किताब 'आमाली' में हज़रत इमाम जाफ़र सादिक़ अ0 से यह रिवायत लिखी है। सही बुख़ारी में भी "الصِّراطُ جِسْرُ جَهَنَّم" हेडिंग से एक चैप्टर मौजूद है। (देखिये सही बुख़ारी जि-8 पे-146)

[हम क़यामत के दिन इंसाफ के तराज़ू लगाएँगे फिर किसी पर ज़र्रा बराबर भी ज़ुल्म नहीं होगा। चाहे किसी का अमल (अच्छे और बुरे काम) राई के दाने के बराबर ही क्यों न हो, हम उसे हाज़िर करेंगे। और हम हिसाब करने के लिए बहुत काफी हैं।] (सूरा 'अम्बिया' आयत 47)

"فَأَمَّا مَنْ ثَقُلَتْ مَوَازِيْنُهُ فَهُوَ فِي عِيْشَةٍ رَّاضِيَةٍ، وَأَمَّا مَنْ خَفَّتْ مَوَازِيْنُهُ فَأُمُّهُ هَاوِيَه."

[अलबत्ता वह शख़्स जिसके आमाल का पल्ला भारी होगा वह एक ख़ुशहाल (भली-चंगी) ज़िन्दगी बिताएगा और जिसके आमाल का पल्ला हल्का होगा उसका ठिकाना जहन्नम है।]

(सूरा 'क़ारिअ' आयत 6-9)

हाँ! हमारा अक़ीदा है कि इस दुनिया में इंसान की नजात (मोक्ष) और कामियाबी की बुनियाद उसके आमाल पर है न कि उसकी आरज़ू और ख़यालों पर। हर एक को उसके कामों का बदला मिलेगा। नेकी और तक़वे के बिना कोई कामियाब नहीं होगा।

"كُلُّ نَفْسٍ بِمَا كَسَبَتْ رَهِيْنَةٌ."

[हर कोई अपने कामों के बदले गिरवी है।]

(सूरा 'मुद्दस्सिर' आयत 38)

पुलसिरात और मीज़ान के बारे में यह एक मुख़्तसर सी वज़ाहत थी, हालांकि इनकी तफसीलों की हमें जानकारी नहीं है जैसा कि पहले भी हम बता चुके हैं कि आख़िरत की दुनिया इस दुनिया से बहुत बड़ी है जिसमें हम रह रहे हैं। इसलिए इस दुनिया की सभी बातों का समझना हम इस माद्दी दुनिया के इंसानों के लिए मुश्किल है।

41– क़यामत के दिन शिफाअत

हमारा अक़ीदा है कि: क़यामत के दिन नबी मासूम इमाम और अल्लाह के वली (दोस्त) ख़ुदा की इजाज़त से कुछ गुनाहगारों की सिफारिश फरमाएँगे तो उन्हें ख़ुदा की माफी नसीब हो जाएगी। यह बात याद रहे कि यह इजाज़त सिर्फ उन लोगों के लिए होगी जिन्होंने अल्लाह और अल्लाह वालों से अपना नाता जोड़े रखा होगा। इसलिए सिफारिश शर्त के साथ है। यह बात भी हमारी नीयतों और कामों से एक तरह से जुड़ी हुई है।

इरशाद होता है:

"وَلَا يَشْفَعُوْنَ اِلَّا لِمَنِ ارْتَضٰى."

[वह सिर्फ उसी की सिफारिश करेंगे जिसकी सिफारिश पर ख़ुदा राज़ी होगा।] (सूरा 'अम्बिया' आयत 28)

जिस तरह पहले इशारा किया जा चुका है, ''सिफारिश' इंसानों के सुधारने का एक रास्ता और गुनाह में डूबने से रोकने का तरीक़ा, और अल्लाह वालों से नाता बाक़ी रखने का एक रास्ता है। मानो यह अक़ीदा इंसान से कहता है: अगर तुम से कोई गुनाह हो भी गया है तो यहीं से पलट जाओ और इससे ज़्यादा गुनाह मत करो।

यक़ीनी तौर से ''बड़ी शिफाअत'' का हक़ पैगम्बरे इस्लाम (स0) को मिला हुआ है। उनके बाद बाक़ी नबियों और मासूम इमामों यहाँ तक कि शहीदों, उलमा, ख़ुदा को जाने–समझे लोग और अपने ईमान के पूरे मोमिनों और साथ में कुर्आन और अच्छे काम भी कुछ लोगों की सिफारिश करेंगे।

हज़रत इमाम जाफर सादिक़ (अ0) से रिवायत (बताई हुई) एक हदीस में आया है:

"مَا مِنْ اَحَدٍ مِنَ الْاَوَّلِيْنَ وَالْاٰخِرِيْنَ اِلَّا وَهُوَ يَحْتَاجُ اِلٰى شَفَاعَةِ مُحَمَّدٍ يَوْمَ الْقِيَامَةِ."

[पहले वालों और बाद वालों में से कोई भी ऐसा नहीं है जिसे क़यामत के दिन हज़रत मुहम्मद (स0) की सिफारिश की ज़रूरत न हो।] (बिहारुलअनवार जि–8 पे–42)

'कन्ज़ुल उम्माल' किताब में हमारे प्यारे नबी (स0) की एक हदीस यूँ कहती है:

"اَلشُّفَعَاءُ خَمْسَةٌ: اَلْقُرْآنُ وَالرَّحْمُ وَالْاَمَانَةُ وَنَبِيُّكُمْ وَاَهْلُ بَيْتِ نَبِيِّكُمْ."

[क़यामत के दिन सिफारिश करने वाले पाँच होंगे: क़ुर्आन, सिला रहमी (अपने क़रीबी लोगों से अच्छा बरताव), अमानत, तुम्हारे नबी (स0) और तुम्हारे नबी के अहलेबैत (स0)।]

(कन्ज़ुल उम्माल ह–39041 जि–14 पे–390)

हज़रत इमाम जाफ़र सादिक़ (अ0) की बताई हुई एक और हदीस कुछ यूँ है:

"اِذَا كَانَ يَوْمُ الْقِيَامَةِ بَعَثَ اللّٰهُ الْعَالِمَ والْعَابِدَ، فَاِذَا وَقَفَا بَيْنَ يَدَى اللّٰهِ عَزَّوَجَلَّ قِيْلَ لِلْعَابِدِ اِنْطَلِقْ اِلَى الْجَنَّةِ، وَقِيْلَ لِلْعَالِمِ قِفْ تَشْفَعُ لِلنَّاسِ بِحُسْنِ تَادِيْبِكَ لَهُمْ."

[जब क़यामत का दिन होगा तो ख़ुदा आलिम (जानने वाले–ज्ञानी) और आबिद (इबादत करने वाले–साधक) को उठायेगा। जब वे दोनों ख़ुदा के सामने खड़े होंगे तो आबिद से कहा जाएगा

जन्नत में दाख़िल हो जाओ और आलिम से कहा जाएगा खड़े रहो और लोगों की जो अच्छी तरबियत तुमने की थी उसकी बुनियाद पर उनकी सिफारिश करो।] (बहारुलअनवार जि-8 पे-56 ह-66)

यह हदीस सिफारिश के फलसफे की तरफ भी लतीफ इशारा है।

42- बरज़ख़ की दुनिया

हमारा अक़ीदा है कि: इस दुनिया और आख़िरत के बीच एक तीसरी दुनिया भी मौजूद है जिसका नाम 'बरज़ख़' है। मौत के बाद और क़यामत तक सभी इंसानों की रूहें उसमें ठहरेंगी।

"وَمِنْ وَّرَآئِهِمْ بَرْزَخٌ اِلٰى يَوْمِ يُبْعَثُوْنَ."

[और उनके पीछे (मौत के बाद) क़यामत तक एक बरज़ख़ है।]

(सूरा 'मोमिनून' आयत 100)

यह बात अलग है कि हम बरज़ख़ के हिस्सों से भी ज़्यादा जानकारी नहीं रखते और न ही ऐसा मुमकिन है। बस हम इतना ही जानते हैं कि नेक और अच्छे काम करने वाले लोगों की रूहें जो ऊँचे दर्जों वाली हैं (जैसे शहीदों की रूहें) 'बरज़ख़' में बहुत सी नेमतों से फाएदा उठाती हैं।

"وَلَا تَحْسَبَنَّ الَّذِيْنَ قُتِلُوْا فِىْ سَبِيْلِ اللّٰهِ اَمْوَاتاً بَلْ اَحْيَآءٌ عِنْدَ رَبِّهِمْ يُرْزَقُوْنَ."

[ऐसा हरगिज़ मत सोचो कि जो लोग ख़ुदा के रास्ते में मारे गये वे मुर्दा हैं बल्कि वे ज़िन्दा हैं और अपने अल्लाह के यहाँ रोज़ी (जीविका) पा रहे हैं।] (सूरा आले इमरान आयत 169)

बुरे व ग़लत काम करने वालों, घमन्डियों और उनके

साथियों की रूहें बरज़ख़ में अज़ाब पाएँगी। जैसा कि क़ुर्आन ने फ़िरऔन और फ़िरऔन वालों के बारे में कहा है:

"اَلنَّارُ يُعْرَضُوْنَ عَلَيْهَا غُدُوّاً وَّعَشِيّاً وَيَوْمَ تَقُوْمُ السَّاعَةُ اَدْخِلُوْا آلَ فِرْعَوْنَ اَشَدَّ الْعَذَابِ."

[(बरज़ख़ में) उनका अज़ाब (जहन्नम की) आग है। उन्हें सुबह शाम उसके आगे किया जायेगा। और जब क़यामत होगी (तो इरशाद होगा) फ़िरऔन वालों को सख़्त से सख़्त अज़ाब में डाल दो।]

(सूरा मोमिन आयत 46)

लेकिन तीसरा गिरोह जिनके गुनाह थोड़े हैं वह न इस गिरोह के साथ हैं और उन उस गिरोह के साथ, वह अज़ाब व सज़ा से बचे रहेंगे। जैसे वे बरज़ख़ में नींद जैसी हालत में होंगे और क़यामत के दिन जागेंगे।

"وَيَوْمَ تَقُوْمُ السَّاعَةُ يُقْسِمُ الْمُجْرِمُوْنَ مَا لَبِثُوْا غَيْرَ سَاعَةٍ....وَقَالَ الَّذِيْنَ اُوْتُوْا الْعِلْمَ وَالْإِيْمَانَ لَقَدْ لَبِثْتُمْ فِي كِتَابِ اللّٰهِ اِلٰى يَوْمِ الْبَعْثِ فَهٰذَا يَوْمُ الْبَعْثِ وَلٰكِنَّكُمْ كُنْتُمْ لَا تَعْلَمُوْنَ."

[और जिस दिन क़यामत आएगी तो गुनाहगार (पापी) क़सम खाएँगे कि वह आलमे बरज़ख़ में एक घड़ी ही ठहरे हैं। लेकिन वह लोग जिन्हें जानकारी व ईमान दिया गया है (वह मुजरिमों से कहेंगे) तुम ख़ुदा के हुक्म से क़यामत के दिन तक (बरज़ख़ की दुनिया में) ठहरे हुए थे। अब क़यामत का दिन है लेकिन तुम नहीं जानते थे।] (सूरा रूम आयत 56)

हदीस में भी आया है कि रसूलुल्लाह (स0) ने फ़रमाया है कि:

"اَلْقَبْرُ رَوْضَةٌ مِنْ رِيَاضِ الْجَنَّةِ اَوْ حُفْرَةٌ مِنْ حُفَرِ النِّيْرَانِ."

[क़ब्र तो जन्नत के बाग़ों में से एक बाग़ है या दोज़ख़ के गढ़ों में से एक गढ़ा।][1]

43- बदलेः जिस्म और रूह से जुड़े

हमारा अक़ीदा है किः क़यामत के दिन मिलने वाला बदला जिस्म और रूह दोनों से जुड़ा हुआ है, क्योंकि क़यामत में फिर (जी) उठना रूह से होने के साथ-साथ जिस्म का भी होगा।

क़ुर्आन मजीद और हदीसों में जन्नत के बाग़ों के बारे में कहा गया है कि इसके पेड़ों के नीचे नहरे बहती होंगी।

"جَنّٰتٍ تَجۡرِیۡ مِنۡ تَحۡتِهَا الۡاَنۡهٰرُ."

(सूरा 'तौबा' आयत 89)

और यह कि जन्नत के बाग़ों के फल और साए हमेशा के लिए होंगे।

"اُكُلُهَا دَآئِمٌ وَّظِلُّهَا"

और मोमिन लोगों के लिए जन्नत में बीवियाँ होंगी।

"وَاَزۡوَاجٌ مُّطَهَّرَةٌ."

(सूरा 'आले इमरान' आयत 15)

याद रहे कि यह और इसी तरह जहन्नम की जलाने वाली आग और उसकी दुख देने वाली सज़ाओं का बयान आया है वे सब आख़िरत के जिसमानी बदले, सज़ा व इनाम से जुड़े हैं।

लेकिन इन से बढ़कर रूहानी व मानसिक नेमतें, खुदा

---

(1) देखिये सही तिरमिज़ी, जि-4, किताब 'सिफतुल क़ियाम' बा-26 ह-2460। शीआ मॉख़ज़ (स्रोता) में यह हदीस कहीं अमीरुलमोमिनीन (अ0) से और कहीं ज़ैनुल आबिदीन (अ0) से रिवायत की गई है। (बिहारुलअनवार जि-6 पे-214 व 218)

की पहचान की रौशनी, ख़ुदा का रूहानी पड़ोस और उसकी ख़ूबसूरती (सत्यम शिवम सुन्दरम) के जलवे हैं। यह ऐसे मज़े हैं जो ज़बान से और कहकर नही बताये जा सकते।

कुर्आन की कुछ आयतों मे जन्नत की कुछ जिस्म से जुड़ी नेमतों (हरे–भरे बाग़ और पाकीज़ा घर) के बयान के बाद इरशाद हुआ है:

"وَرِضْوَانٌ مِنَ اللّٰهِ اَكْبَرُ."

[ख़ुदा की मरज़ी ख़ुशी और चाहत सबसे बढ़कर है।]

इसके बाद इरशाद होता है:

"ذٰلِكَ هُوَ الْفَوْزُ الْعَظِيْمُ."

[यही तो बहुत बड़ी कामियाबी (और भलाई) है।

(सूरा 'तौबा' आयत 72)

जी हाँ इससे बढ़कर मज़े की बात और कौन सी होगी कि इंसान यह महसूस करे कि उसके बड़े और प्यारे माबूद (जिसकी इबादत, पूजा, साधना की जाए) ने उसे अपने दरबार में इज़्ज़त दी और उसे अपनी ख़ुशी के साए में जगह दी है!

इमाम जै़नुलआबिदीन (अ0) की बताई हुई एक हदीस में है कि:

"يَقُوْلُ (اللّٰهُ) تَبَارَكَ وَتَعَالٰى رِضَاىَ عَنْكُمْ وَمُحَبَّتِىْ لَكُمْ خَيْرٌ وَاَعْظَمُ مِمَّا اَنْتُمْ فِيْهِ...."

[अल्लाह तआला उनसे कहेगा कि तुम से मेरी ख़ुशी और तुमसे मेरी मुहब्बत उन नेमतों से अच्छी और बढ़कर है जो तुम्हें मिली हैं। वे सब यह बात सुनेंगे और इनकी तसदीक़ करेंगे।][1]

---

(1) तफ़सीरे अयाशी, जि–9 सूरा 'तौबा' की आयत 72 में आये 'मीज़ान' की रिवायत से।

सचमुच इस से बढ़कर कौन सा मज़ा हो सकता है कि इंसान से कहा जाए:

"يٰٓاَيَّتُهَا النَّفْسُ الْمُطْمَئِنَّةُ، ارْجِعِيْٓ اِلٰى رَبِّكِ رَاضِيَةً مَّرْضِيَّةً، فَادْخُلِيْ فِيْ عِبَادِيْ وَادْخُلِيْ جَنَّتِيْ."

[तू ऐ मुतमइन नफ्स (चैन ढारस वाली जान) अपने पालने वाले की तरफ पलट जा इस हाल में कि तू उससे राज़ी हो और वह तुझ से, बस मेरे बन्दों (दासों) की सफ में शामिल हो (चल) जाओ और मेरी जन्नत में दाख़िल हो (चले) जाओ।]

(सूरा 'फ़ज्र' आयत 27-30)



पाँचवा चैप्टर

पाँचवा चैप्टर

इमामत

44- हर ज़माने (काल) में इमाम मौजूद रहा है

हमारा अक़ीदा है कि: जिस तरह ख़ुदा की सूझबूझ का तक़ाज़ा है कि इंसानों को सही रास्ता दिखाने के लिए नबी भेजे गये, उसी तरह उसकी इसी सूझबूझ का तक़ाज़ा है कि हर ज़माने में नबियों के बाद इंसानों को सही रास्ता दिखाने के लिए उनकी तरफ कोई इमाम और रास्ता दिखाने वाला भेजा जाए, ताकि वह नबियों की शरीअतों और अल्लाह के दीन को उलट-फेर और बदलावों से बचाए, हर ज़माने की ज़रूरतों को सामने लाए और लोगों को ख़ुदा और नबियों के दीन की तरफ़ बुलाए और उस पर चलने को कहे। अगर ऐसा न हुआ तो इंसान की पैदाईश का मक़सद जो उसे ऊँचाई, कमाल और भलाई तक पहुँचाता है पूरा नहीं होगा, इंसान हिदायत के रास्ते पर नहीं चल सकेगा, नबियों की शरीअतें बर्बाद हो जाएँगी और लोग छुट्टा इधर-उधर भटकते हैरान परेशान हो जाएँगे।

इसलिए हमारा अक़ीदा है कि पैग़म्बरे इस्लाम (स0) के बाद हर समय और हर ज़माने में कोई न कोई इमाम मौजूद रहा है।

"يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ وَكُونُوا مَعَ الصَّادِقِينَ."

[ऐ ईमान वालों तक़वा (ख़ुदा का डर) अपनाओ और सच्चों के साथ हो जाओ।] (सूरा 'तौबा' आयत 119)

यह आयत किसी ख़ास ज़माने के साथ ख़ास नहीं



है और बिना किसी शक व शुब्हे के इस बात की दलील है कि हर ज़माने में एक ऐसा मासूम इमाम मौजूद है जिसकी बात पर चलना और उसके पीछे चलना ज़रूरी है। बहुत से शीआ और सुन्नी मुफस्सिरों ने अपनी तफसीरों में इसकी तरफ इशारा किया है।[1]

45– इमामत क्या है?

हमारा अक़ीदा है कि: इमामत सिर्फ ज़ाहिरी हुकूमत का ओहदा (पद) नहीं है बल्कि एक बहुत ही ऊँचा और रूहानी मन्सब (Designation) है। इमाम इस्लामी हुकूमत क सरदार (नेता) होने के साथ–साथ दीन व दुनिया के मामले में भरपूर रास्ता दिखाने का भी ज़िम्मेवार है। इमाम लोगों की रूहानी और सोच का रास्ता दिखाता है और पैग़म्बरे इस्लाम (स0) की शरीअत को किसी भी उलट–फर और बदलाव से बचाए हुए रखता है। इमाम उन निशानों और मक़सदों को पूरा करता है जिनके लिए पैग़म्बर (स0) भेजे गये थे।

यह वही बड़ा मन्सब है जो ख़ुदा ने इब्राहीम ख़लीलुल्लाह (अ0) (अल्लाह के दोस्त) को रसूल व नबी होने

---

(1) इस आयत पर बहुत लिखने के बाद फख़रुद्दीन राज़ी ने यूँ कहा है: यह आयत इस बात की दलील है कि जिससे भी गलती होना मुमकिन हो उसके लिए ज़रूरी है कि उसके पीछे चलने वाला और मानने वाला हो जो मासूम है, और मासूम वही हैं जिन्हें ख़ुदा ने "सादिक़ीन" (सच्चे) का लक़ब (संज्ञा) दिया है। इसलिए यह बात इसकी दलील है कि हर कोई जिससे गलती हो सकती हो उस पर वाजिब है कि वह मासूम के पीछे चलने वाला और मानने वाला (अनुयायी) हो ताकि मासूम (जो ग़लती नहीं करता) उस इंसान को (जिससे ग़लती हो सकती हो) ग़लती से रोके। यह मुद्दा सभी ज़मानों में चलता चला आ रहा है और किसी ख़ास ज़माने के साथ ख़ास नहीं है। यह इस बात पर दलील है कि हर ज़माने में ग़लतियों से दूर मासूम एक शख़सियत मौजूद है। (देखिये 'तफसीरे कबीर' जि–16 पे–221)

के बाद और कई इम्तिहानों में पूरा उतरने के बाद दिया। उन्होंने भी ख़ुदा से अपनी नस्ल और औलाद में से कुछ के लिए इस बड़े मन्सब की दरख़्वास्त की और उन्हें यह जवाब मिला कि ज़ालिम (ग़लत करने वाले) व पापी लोग हरगिज़ इस जगह पर नहीं बैठ सकेंगे।

"وَاِذِ ابْتَلٰی اِبْرَاهِیْمَ رَبُّهٗ بِکَلِمٰتٍ فَاَتَمَّهُنَّ قَالَ اِنِّی جَاعِلُکَ لِلنَّاسِ اِمَامًا قَالَ وَمِنْ ذُرِّیَّتِی قَالَ لَا یَنَالُ عَهْدِی الظّٰلِمِیْنَ."

[उस वक़्त को याद करो जब ख़ुदा ने इब्राहीम (अ0) को कई चीज़ों से जाँचा परखा और वह ख़ुदा की जाँच परख से कामियाब होकर निकले (पूरे उतरे)। (ख़ुदा ने) फ़रमाया मैंने तुझे लोगों का इमाम बनाया है। इब्राहीम ने कहा, मेरी नस्ल में भी इमाम बना। (ख़ुदा ने) फ़रमाया मेरा अह्द (इमामत) हरगिज़ ज़ालिमों (अनर्थ/ग़लत करने वालों) को नहीं मिल सकता। (और तेरी नस्ल से सिर्फ कुछ मासूम लोगों को ही दिया जाएगा)।] (सूरा 'बक़रः' आयत 124)

याद रहे कि इतना बड़ा मन्सब सिर्फ ज़ाहिरी हुकूमत से नहीं जोड़ा जा सकता। अगर इमामत का मतलब वह न हो जो हमने ऊपर बयान किया तो ऊपर दी गयी आयत का कोई साफ मतलब ही नहीं रहेगा।

हमारा अक़ीदा है किः सभी उलुलअज़्म नबियों को इमामत का मन्सब मिला हुआ था। जो कुछ उन्होंने अपनी रिसालत से पेश किया/बताया उस पर खुद चाले। वे लोगों के रूहानी, माद्दी, शारीरिक, आध्यात्मिक, ज़ाहिरी और बातिनी सरदार/मुखिया थे। ख़ास कर पैग़म्बरे इस्लाम (स0) तो अपनी नुबुव्वत के शुरु से ही इमामत के बड़े दर्जे पर थे। उनका काम सिर्फ ख़ुदा के हुक्मों को आगे पहुँचाना नहीं था।

हमारा अक़ीदा है कि: पैग़म्बरे इस्लाम (स0) के बाद इमामत का सिलसिला उनकी पाक नस्ल/सन्तान में चलता रहा।

इमामत की जो तारीफ़ (परिभाषा) ऊपर की गई है उससे अच्छी तरह मालूम होता है कि उस दर्जे तक पहुँचना कड़ी शर्तों के साथ ही है, चाहे तक़वा (हर गुनाह से मासूम होने की हद तक) के लेहाज़ से हो या जानकारी व समझदारी और दीन की सभी बातों और हुक्मों को जानने और इंसानों की पहचान और हर ज़माने में उनकी ज़रूरतों को समझने के बारे में। (ग़ौर कीजिये)

46- इमाम गुनाह और ग़लती से बचा हुआ मासूम होता है

हमारा अक़ीदा है कि: इमाम को हर गुनाह और ग़लती से बचा (मासूम) होना चाहिए, क्योंकि ऊपर दी गयी आयत की तफ़सीर में बयान की गई बात के अलावा ग़ैर मासूम शख़्स पर पूरी तरह भरोसा नहीं किया जा सकता और इससे दीन के उसूल व फ़ुरूअ् नहीं समझे जा सकते। इसलिए हमारा अक़ीदा है कि इमाम का कहना, उसकी करनी और उसका किसी बात या काम को मान लेना और उसकी सहमति/तक़रीर हुज्जत (प्रमाण) आर शरअी दलील की तरह हैं। ('तक़रीर' का मतलब यह कि इमाम के सामने कोई काम किया जाए और वह ख़ामोशी से उसकी ताईद करे, सहमति दे।)

47- इमाम— शरीअत की हिफ़ाज़त करने वाला

हमारा अक़ीदा है कि: इमाम हरगिज़ अपने साथ कोई शरीअत या दीन लेकर नहीं आता बल्कि उसकी ज़िम्मेवारी

पैग़म्बर (स0) के दीन की हिफाज़त और आप (स0) की शरीअत की रखवाली है। उसका काम दीन को फैलाना, दीन सिखाना, दीन की हिफाज़त और लोगों को इस दीन की तरफ बुलाना है।

48- इमाम— लोगों में सबसे ज़्यादा इस्लाम का जानने वाला है

हमारा यह भी अक़ीदा है कि: इमाम को इस्लाम के सभी उसूल व फुरूअ, सभी हुक्म और क़ानून और क़ुर्आन के मानी व तफसीर से पूरी तरह जानकार होना चाहिए। इन चीज़ों के बारे में जानकारी उसे ख़ुदा की ज़ात से ही मिली है और यह जानकारी पैग़म्बर (स0) के ज़रिये (माध्यम) से उसे मिलती है।

जी हाँ! इस तरह की जानकारी पर ही लोगों को भरपूर भरोसा हो सकता है और इस्लाम की सच्चाइयों को समझने के लिए उस पर ही भरोसा किया जा सकता है।

49- इमाम को मनसूस (Designated) होना चाहिए

हमारा अक़ीदा है कि: इमाम (पैग़म्बर की जगह बैठने वाला/उत्तराधिकारी) को मनसूस होना चाहिए, यानि उसकी इमामत पैग़म्बर (स0) के खुले हुए और साफ़–साफ़ फरमान (कहने) के मुताबिक़ होनी चाहिए और बाद वाले इमाम के लिए पहले इमाम की वज़ाहत (सफ़ाई) ज़रूरी है। दूसरे लफ़्ज़ों में, इमाम भी पैग़म्बर (स0) की तरह ख़ुदा की तरफ से (पैग़म्बर के ज़रिए) तैय और नियुक्ति होता है। जिस तरह हमने इब्राहीम (अ0) की इमामत के बारे में आयत में पढ़ा है:

"اِنِّی جَاعِلُکَ لِلنَّاسِ اِمَاماً."

[मैंने तुझे लोगों का इमाम क़रार (ठहराया) दिया है।]

इसके अलावा (मासूम होने की हद तक) तक़वा (संयम–खुदा का डर) और जानकारी का ऊँचा स्थान (जो सभी हुक्मों और अल्लाह की शिक्षाओं पर ऐसे घेराव की तरह हो जिसमें ग़लती व शक की गुन्जाइश न हो) की मौजूदगी का इल्म सिर्फ खुदा और रसूल के पास ही हो सकता है।

इस बुनियाद पर हमारे अक़ीदे के हिसाब से मासूम इमामों की इमामत लोगों की राय से नहीं मिल सकती।

50– इमामों का तैय किया जाना— रसूले ख़ुदा (स0) के ज़रिए

हमारा अक़ीदा है किः पैग़म्बरे इस्लाम (स0) ने अपने बाद वाले इमामों को तैय करके बताया है। हदीसे सक़लैन (जो जानी–मानी हदीस है) में हुज़ूर ने इमामों की इजमाली (संक्षेप में) बात की है।

सही बुख़ारी में आया है कि मक्का व मदीना में बीच ''ख़ुम'' नाम जगह पर पैग़म्बर (स0) ने खड़े होकर एक खुतबा (प्रवचन) दिया। इसके बाद फरमायाः मैं क़रीब है कि तुम लोगों से अलग हो जाऊँगा।

''اِنّی تارِکٌ فِیکُمُ الثَّقَلَین، اَوَّلُهُمَا کِتابُ اللّٰهِ فِیهِ الْهُدٰی وَالنُّورُ.... وَاَهْلُ بَیْتِی، اُذَکِّرُکُمُ اللّٰهَ فِیْ اَهْلِ بَیْتِیْ.''

[मैं तुम्हारे बीच दो क़ीमती (भारी) चीज़ें छोड़े जा रहा हूँ। उनमें से पहली चीज़ अल्लाह की किताब है जिसमें रौशनी और हिदायत (सही रास्ता दिखाना) है......और (दूसरी चीज़) मेरे अहलेबैत (अ0) हैं। मैं तुम्हें नसीहत करता हूँ कि मेरे अहलेबैत के सिलसिले में खुदा को न भूल जाना।]

(आप स0 ने यह बता तीन बार दोहरायी)।[1]

सही तिरमिज़ी में भी इस बात का बयान हुआ है और साफ़-साफ लिखा है कि अगर इन दोनों से जुड़े रहोगे तो हरगिज़ कभी भी बिलकुल न भटकोगे।[2]

यह हदीस सु-नने दारमी,[3] 'ख़साएस' निसाई,[4] मुस्नद अहमद,[5] और दूसरी जानी-पहचानी इस्लामी किताबों में भी मिलती हैं। इसमें किसी तरह का शक नहीं हो सकता। हक़ीक़त में इस हदीस की गिनती उन मुतवातिर (लगातार दुहराई गई) हदीसों में होता है जिनका इन्कार कोई मुसलमान नहीं कर सकता। हदीसों से मालूम होता है कि पैग़म्बर (स0) ने एक बार नहीं बल्कि कई बार अलग-अलग मौक़ों पर यह हदीस बयान फरमाई है।

खुली हुई बात है कि पैग़म्बर (स0) की नस्ल (सन्तान) के सारे लोग इस बड़े मरतबे/स्थान के पाने वाले और कुर्आन के बराबर नहीं हो सकते। इसलिए यह पैग़म्बर (स0) की नस्ल में से सिर्फ मासूम इमामों की तरफ इशारा है। (याद रहे कि सिर्फ कमज़ोर और शक वाली हदीसों में "अहलेबैती" की जगह "सुन्नती" आया है)।

इस सिलसिले में हम एक और जान-मानी हदीस से दलील देंगे (जो सही बुख़ारी, सही मुस्लिम, सही तिरमिज़ी, सही अबुदाऊद, मुस्नद अहमद बिन हम्बल और दूसरी किताबों में आई है)। पैग़म्बर (स0) ने फरमाया:

"لَا يَزَالُ الدِّيْنُ قَائِمًا حَتّٰى تَقُوْمَ السَّاعَةُ اَوْ يَكُوْنَ عَلَيْكُمْ

---

(1) सही मुस्लिम जि-4 पे-1873 (2) सही तिरमिज़ी जि-5 पे-662

(3) सु-नने दारमी जि-2 पे-432 (4) 'ख़साएस' नेसाई पे-20

(5) मुस्नद अहमद जि-5 पे-182 और किताब 'कन्जुल उम्माल' जि-1 पे-185 ह-945

اثْنَتَیْ عَشَرَ خَلِیْفَۃ کُلُّھُمْ مِنْ قُرَیْشٍ."

[इस्लाम दीन ठहरा रहेगा यहाँ तक कि क़यामत आ जाए या बारह ख़लीफा तुम पर हुकूमत करें, यह ख़लीफा सब के सब कुरैश* से होंगे।](1)

हमारा अक़ीदा है कि: इन रिवायतों का मानने वाला मतलब वही हो सकता है जो बारह इमामों के बारे में शीआ इमामिया ने निकाला है। ज़रा ग़ौर कीजिए कि क्या अलावा कोई सही मतलब हो सकता है?

51- पैग़म्बर (स0) के ज़रिए हज़रत अली (अ0) की नियुक्ति (तैय किया जाना)

हमारा अक़ीदा है कि: पैग़म्बरे इस्लाम ने कई जगहों पर हज़रत अली (अ0) को ख़ास अपने जानशीन (आसन-धारी) के तौर पर (ख़ुदा के हुक्म से) तैय फरमाया है। इसी तरह एक बार आख़री हज से लौटते वक़्त सहाबा के एक बहुत बड़े मजमे में ग़दीरे खुम (जह्फा के क़रीब एक जगह) की जगह पर खुतबा देते हुए फरमाया:

"اَیُّھَا النَّاسُ اَلَسْتُ اَوْلٰی بِکُمْ مِنْ اَنْفُسِکُمْ قَالُوْا بَلٰی، قَالَ:
فَمَنْ کُنْتُ مَوْلَاہُ فَعَلِیٌّ مَوْلَاہُ."

[ऐ लोगों क्या मैं तुम पर तुम्हारी जानों से ज़्यादा इख़्तियार

---

*वह क़बीला/जाति जिससे हमारे रसूल (स0) थे (अनुवादक)

(1) सही मुस्लिम जि-3 पे-1453 में यह इबारत "जाबिर बिन समरा" ने नबी-ए-अकरम (स0) से नक़ल की (दुहराई) है। थोड़े से फर्क़ के साथ यही बात ऊपर बताई गयी किताबों में मौजूद है। (देखिये सही बुख़ारी जि-3 पे-101, सही तिरमिज़ी जि-4 पे-501 और सही अबुदाऊद जि-4 किताबुल मह्दी)।

(अधिपत्व) नहीं रखता? उन्होंने कहा, क्यों नही। आप (स0) ने फरमाया: तो मैं जिसका मौला हूँ उसका अली (अ0) मौला है।](1)

यहाँ हम नही चाहते कि इन अक़ीदों की और दलीलें बयान करें और बहस व बात को लम्बा करें, इसलिए हम यही कहना काफी समझते हैं कि इस हदीस की आसानी से अनदेखी नहीं की जा सकती और न ही इसे आम सी खुशी या मुहब्बत दिखाने पर ले जाया जा सकता है जबकि पैग़म्बर ने इतनी बड़ी तैयारी और ज़ोर के साथ इसे बयान किया है।

क्या यह वही चीज़ नहीं है जिसको इब्ने कसीर ने अपनी 'तारीखुल कामिल' में बयान किया है? कि पैग़म्बर ने अपनी तबलीग़ की शुरुआत में कुर्आनी आयत:

"وَاَنْذِرْ عَشِيْرَتَكَ الْاَقْرَبِيْنَ."

नाज़िल होने के बाद अपने क़रीबी अज़ीज़ों को इकटठा किया और उनके सामने इस्लाम पेश करने के बाद फरमाया:

"اَيُّكُمْ يُوَازِرُنِیْ عَلٰى هٰذَا الْاَمْرِ عَلٰى اَنْ يَّكُوْنَ اَخِیْ وَوَصِیِّ وَخَلِيْفَتِیْ فِيْكُمْ."

[तुम में से कौन इस काम में मेरी मदद करेगा ताकि वह मेरा भाई, मेरा वसी और तुम्हारे बीच मेरा ख़लीफा* व जानशीन हो?]

---

(1) यह हदीस बहुत सी सनदों (भरोसे वाली कड़ियों) के ज़रिए नबी (स0) से दुहाई गई है। हदीस के रावियों (कहने वाले-वाचक) की गिनती 110 सहाबी और 84 ताबई (सहाबी के बिलकुल बाद के लोग) से ज़्यादा है। 360 से ज़्यादा मशहूर इस्लामी किताबों में यह हदीस लिखी है जिसका ज़्यादा बयान इस मुख़्तसर सी किताब में नहीं दिया जा सकता। (देखिये पयामे कुर्आन जि-9 पे-181 और इसके आगे)

*यहाँ रसूल (स0) ने 'वसी' और 'ख़लीफा' कहा है। हम इन दोनों को लगभग एक ही समझते हैं। इनके मानों में थोड़ा सा फर्क़ है। वसी वह होता है जिसके बारे में वसियत की जाए। ख़लीफा उत्तराधिकारी किसी के बाद उसकी जगह उसके कामों और ज़िम्मेवारियों को पूरा करने वाला और उसके हक़ अधिकारों को पाने वाला होता है।

हज़रत अली (अ0) के सिवा किसी ने पैग़म्बर (स0) की बात का जवाब न दिया। हज़रत अली (अ0) ने अर्ज़ किया:

"اَنَا يَا نَبِيَّ اللّٰهِ اَكُوْنُ وَزِيْرَكَ عَلَيْهِ."

[ऐ अल्लाह के नबी मैं इस काम में आपका वज़ीर (बोझ बंटाने वाला) और मददगार बनूँगा।]

पैग़म्बर (स0) ने इनकी तरफ इशारा किया और फरमाया:

"اِنَّ هٰذَا اَخِيْ وَوَصِيِّ وَخَلِيْفَتِيْ فِيْكُمْ."

[बस–बस यही यही मेरा भाई मेरा वसी और तुम्हारे बीच मेरा जानशीन है।][(1)]

क्या यह वह बात नहीं है जिसका एलान पैग़म्बरे इस्लाम (स0) ने अपनी ज़िन्दगी के आख़री हिस्से में एक बार फिर करना चाहते थे और इस पर ज़ोर देना चाहते थे? सही बुख़ारी के बक़ौल आप (स0) ने हुक्म दिया:

"اِيْتُوْنِيْ اَكْتُبُ كِتَابًا لَنْ تَضِلُّوْا بَعْدَهٗ اَبَدًا."

[कोई चीज़ (कागज व क़लम) ले आओ ताकि तुम्हारे लिए ऐसी चीज़ लिख दूँ जिसके बाद तुम हरगिज़ (कभी भी बिलकुल) न भटकोगे।]

इसी हदीस में लिखा है कि कुछ लोगों ने इस बारे में पैग़म्बर (स0) की मुख़ालेफत की यहाँ तक कि बहुत ही

---

(1) 'कामिल इब्ने असीर' जि–2 पे–63 (प्रकाशित बैरुत/दारुस्सद्र), मुस्नद अहमद बिन हम्बल जि–1 पे–11 शरह नहजुलबलाग़: (इब्ने अबिल हदीद) जि–13 पे–210। दूसरे लेखकों ने भी अपनी किताबों में यही बात बयान की है।



अपमान भरी बात की और रुकावट बन गए।[1]

हम एक बार फिर इस बात को दुहराएँ कि यहाँ हमारा मक़सद अक़ीदों को मुख़्तसर सी दलीलों के साथ बयान करना है और ज़्यादा लम्बी–चौड़ी बहस की गुन्जाईश नही, वरना बात का अन्दाज़ कुछ और होता।

52- हर इमाम की ताईद— अपने बाद वाले इमाम के बारे में

हमारा अक़ीदा है किः बारह इमामों में से हर एक की ताईद (समर्थन) उनसे पहले वाले इमाम के ज़रिए होती है। सबसे पहले इमाम हज़रत अली (अ0) हैं उनके बाद उनके बेटे हज़रत इमाम हसन (अ0), उनके बाद उनके इमाम हज़रत अली (अ0) के दूसरे बेटे (सैय्यदुश्शोहदा) हज़रत इमाम हुसैन (अ0), उनके बाद उनके बेटे हज़रत इमाम ज़ैनुलआबिदीन अली इब्ने हुसैन (अ0), उनके बाद उनके बेटे मुहम्मद बाक़िर (अ0), उनके बाद उनके बेटे जाफर सादिक़ (अ0), फिर उनके बेटे मूसा काज़िम (अ0), उनके बाद उनके बेटे अली रिज़ा (अ0), फिर उनके बेटे मुहम्मद तक़ी (अ0) इनके बाद उनके बेटे अली नक़ी (अ0), उनके बाद उनके बेटे हसन असकरी (अ0) और सबसे आख़री इमाम महदी (अ0) हैं। हमारा अक़ीदा है कि वह अब भी ज़िन्दा हैं लेकिन लोगों की नज़रों से ओझल हैं।

अलबत्ता हज़रत महदी (अ0) (जो दुनिया को बराबरी और इंसाफ से भर देंगे जिस तरह वह ज़ुल्म ज़्यादती से भर चुकी होगी) के वजूद पर ईमान सिर्फ हमारे साथ ख़ास नहीं है

---

(1) बुख़ारी ने जि–5 पे–11 बाब ''मर्ज़ुन्नबी'' में यह हदीस बयान की है। इससे ज़्यादा साफ सही मुस्लिम जि–3 पे–1259 में लिखा है।

बल्कि सभी मुसलमान इस पर ईमान रखते हैं। कुछ सुन्नी उलमा ने हज़रत महदी (अ0) के बारे में रिवायतों के मुतवातिर होने पर अलग किताबें लिखी गई हैं। "राबेता आलमे इस्लामी" की तरफ से प्रकाशित होने वाले रिसाले (पत्रिका) में कुछ साल पहले इमामे महदी (अ0) से मुताल्लिक़ एक सवाल के जवाब में इमाम के ज़हूर (सामने आने) को हतमी (बिलकुल ही होने वाला) ठहराया था और साथ ही हज़रत महदी (अ0) के बारे में पैग़म्बर (स0) की मशहूर व मुस्तनद भरोसे वाली रिवायतों की बहुत सारी सनदों का बयान हुआ था।[1] अलबत्ता उनमें से कुछ इस बात को मानते हैं कि हज़रत महदी (अ0) आख़री ज़माने में पैदा होंगे। लेकिन हमारा अक़ीदा है कि वह बारहवें इमाम हैं और अब भी ज़िन्दा हैं और जब खुदा उन्हें ज़मीन से ज़ुल्म व सितम को खात्म करने और अल्लाह के इंसाफ वाली हुकूमत करने का हुक्म देगा तो वह निकलेंगे और उठ खड़े होंगे।

53- हज़रत अली (अ0), सब सहाबियों से अफज़ल (बढ़े हुए और सबसे बड़े) हैं

हमारा अक़ीदा है कि: हज़रत अली (अ0) सारे सहाबियों से अफज़ल हैं। पैग़म्बर (स0) के बाद इस्लामी उम्मत (समुदाय) में उनकी जगह (हैसियत) सबसे ऊँची है। इसके बाद भी उनके बारे में हर तरह का ग़ुलू (अतिश्योक्ति) हराम है। हमारा अक़ीदा है कि जो लोग हज़रत अली (अ0) के लिए खुदा के दर्जे और पालने वाले के दर्जे या इस तरह की किसी

---

(1) यह खत 24 शव्वाल 1396 हिजरी को "राबेता आलमे इस्लामी" से "मजमउल फिक़्हुल इस्लामी" के डायरेक्टर मुहम्मद अलमुन्तसर अलकतानी के दस्तखत के साथ छपा है।

बात को मानते हैं वे काफ़िर हैं और मुसलमानों के गिरोह से बाहर हैं। हम उनके अक़ीदों से अलग हैं। अफसोस के साथ यह कहना पड़ता है कि शीओं से मिलता जुलता उनका नाम इस बारे में ग़लतफहमियों की वजह बनता है। हालाँकि इमामिया शीआ उलमा ने हमेशा अपनी किताबों में इस गिरोह को इस्लाम से बाहर क़रार दिया है।

54– सहाबा— अक़्ल और तारीख़ में

हमारा अक़ीदा है कि: पैग़म्बर (स0) के सहाबियों में बड़े–बड़े, (आप स0 पर) जान देने वाले और बड़े मरतबे के लोग थे। क़ुर्आन और हदीस ने उनकी फ़ज़ीलत (श्रेष्ठता) में बहुत कुछ बयान किया है। लेकिन इसका यह मतलब नहीं है कि हम पैग़म्बर (स0) के सभी साहाबियों को मासूम मानने लगें और किसी को छोड़े बिना सबके कामों को सही ठहरा दें। क्योंकि क़ुर्आन ने बहुत सी आयतें (सूरा 'तौबा', सूरा 'नूर' और सूरा 'मुनाफ़िक़ीन' की आयतें) में ऐसे मुनाफ़िक़ों का बयान किया है जो पैग़म्बर (स0) के सहाबियों में शामिल थे। ज़ाहिरी तौर पर वे उनका हिस्सा थे लेकिन इसके बाद भी क़ुर्आन ने उनकी बहुत ज़्यादा बुराई की है। दूसरी तरफ कुछ लोग ऐसे भी थे जिन्होंने पैग़म्बर के बाद मुसलमानों में जंग की आग भड़काई, उन्होंने वक़्त के इमाम और ख़लीफा की बैअत तोड़ दी और लाखों मुसलमानों को ख़ून बहाया। क्या हम यह कह सकते हैं कि यह लोग हर तरह से पाक साफ थे?

दूसरे लफ्ज़ों में झगड़े और जंग ('जमल' और 'सिफ्फीन' जंगों) के दोनों ही तरफ़ वालों को किसी तरह सही और ठीक ठहराया जा सकता है? ऐसी ग़लत राय हम



मान नहीं सकते। कुछ लोग इस मसले की वजह के लिए ''इज्तेहाद'' का बहाना बनाते हैं और कहते हैं कि एक तरफ़ वाले हक़ पर थे और दूसरा तरफ वाले ग़लती पर थे लेकिन चूँकि उन्होंने इज्तेहाद पर काम किया है इसलिए खुदा के यहाँ उसकी ग़लती मानने के क़ाबिल है बल्कि उसको सवाब मिलेगा। हमारे लिए इस दलील को मानना मुश्किल है।

इज्तेहाद का बहाना बनाकर पैग़म्बर (स0) के ख़लीफा की बैअत क्योंकर तोड़ी जा सकती है? और फिर जंग की आग भड़काकर बेगुनाह लोगों का ख़ून कैसे बहाया जा सकता है? अगर इज्तेहाद का सहारा लेकर इतने ख़तरनाक ख़ून ख़राबे की वजह बनाई जा सकती है तो फिर कौन सा ऐसा काम है जिसकी ऐसी वज:ह न निकाली जा सके?

हम खुल के कहेंगे कि हमारे अक़ीदे के हिसाब से सभी इंसानों यहाँ तक कि पैग़म्बर (स0) के सहाबियों की अच्छाई बुराई की बुनियाद उनके अपने कामों पर है। क़ुर्आन का यह सुनहरा उसूल

"اِنَّ اَكْرَمَكُمْ عِنْدَ اللّٰهِ اَتْقَاكُمْ."

[**ख़ुदा के यहाँ तुम में सबसे ज़्यादा इज़्ज़त वाला वह है जो तुम में सबसे ज़्यादा मुत्तक़ी है,**] उन पर भी लागू होता है।

(सूरा 'हुजरात' आयत 13)

इसलिए हमें उनके आमाल सामने रखते हुए उनके बारे में फैसला करना होगा। यूँ हम उन सबके बारे में एक अक़्ली राय बनाए हुए कह सकते हैं कि जो लोग आप (स0) के समय में सच्चे सहाबियों में शामिल थे और पैग़म्बर (सC) के इन्तेक़ाल के बाद भी वे इस्लाम की हिफाज़त में लगे रहे और

कुर्आन के साथ अपने वादे को निभाते रहे, हम उनको अच्छा समझते हैं और उनकी इज़्ज़त करते हैं। लेकिन जो लोग आप (स0) के वक़्त में मुनाफ़िक़ों में थे और उन्होंने ऐसे काम किये जिनसे पैग़म्बर का दिल दुखा और पैग़म्बर (स0) के इन्तेक़ाले के बाद उन्होंने अपना रास्ता बदल लिया और ऐसे काम किये जो इस्लाम और मुसलमानों को नुक़सान पहुँचाने वाले थे तो हम उन्हें नहीं मानते। कुर्आने करीम इरशाद फ़रमाता है:

"لَا تَجِدُ قَوْماً يُّؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ يُوَآدُّوْنَ مَنْ حَآدَّاللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ وَلَوْ كَانُوْا آبَآءَ هُمْ اَوْ اَبْنَآءَ هُمْ اَوْ اِخْوَانَهُمْ اَوْ عَشِيْرَتَهُمْ اُولٰٓئِكَ كَتَبَ فِيْ قُلُوْبِهِمُ الْاِيْمَانَ."

[आप ख़ुदा और क़यामत पर ईमान लाने वालों को ख़ुदा और रसूल के साथ नाफ़रमानी करने (फ़िरने) वालों के साथ दोस्ती करते हुए नहीं पाएँगे, चाहे वे उनके बाप, औलाद, भाई या रिश्तेदार ही क्यों न हों। ये वह लोग हैं जिनके दिलों पर अल्लाह ने ईमान को लिख दिया है।] (सूरा 'मुजादला' आयत 22)

जी हाँ! जो लोग पैग़म्बर (स0) की ज़िन्दगी में या हुज़ूर (स0) के इन्तेक़ाल के बाद पैग़म्बर को तकलीफ़ पहुँचाते रहे वे हमारे अक़ीदे के हिसाब से इज़्ज़त, मान–सम्मान के क़ाबिल नहीं हैं।

लेकिन यह बात नहीं भुलाना चाहिए कि पैग़म्बर के कुछ सहाबियों ने इस्लाम की तरक़्क़ी के लिए बड़ी–बड़ी क़ुर्बानियाँ दीं। ख़ुदा ने भी उनकी तारीफ़ की है। इसी तरह जो लोग उनके बाद आए या दुनिया के ख़त्म होने तक आते रहेंगे अगर वह सच्चे सहाबियों के रास्ते पर चलते हुए उनके

मिशन को आगे बढ़ाएँ तो वह भी तारीफ के लायक़ हैं। इरशाद होता है:

"اَلسَّابِقُوْنَ الْاَوَّلُوْنَ مِنَ الْمُهَاجِرِيْنَ وَالْاَنْصَارِ وَالَّذِيْنَ اتَّبَعُوْهُمْ بِاِحْسَانٍ رَضِيَ اللّٰهُ عَنْهُمْ وَرَضُوْا عَنْهُ."

[मुहाजिरों और अन्सार में आगे आने वाले पहले आने वाले लोग और नेकियों में उनके पीछे चलने वालों से अल्लाह राज़ी है और वे अल्लाह से राज़ी हैं।] (सूरा 'तौबा' आयत 100)

यह है पैग़म्बरे इस्लाम (स0) के सहाबियों के बारे में हमारे अक़ीदे का निचोड़।

55- अहलेबैत (स0) की जानकारियाँ (ज्ञान) पैग़म्बर (स0) से मिली हैं

हमारा अक़ीदा है कि: चूँकि लगातार आई रिवायतों के मुताबिक़ पैग़म्बर (स0) ने हमें अहलेबैत (स0) और क़ुर्आन के बारे में हुक्म दिया है कि हम इन दानों का दामन हाथ से न छोड़ें ताकि हम हिदायत पाएँ, और चूँकि हम अहलेबैत के इमामों को मासूम समझते हैं, इसलिए उनकी हर बात और उनका हर काम हमारे लिए हुज्जत और दलील है। इसी तरह उनकी सहमतियाँ 'तक़रीर' (यानि उनके सामने कोई काम किया जाए और वह उस से न रोकें) भी हुज्जत है। इस बुनियाद पर क़ुर्आन व सुन्नत के बाद हमारे फिक़्ह (धर्मविधि–शास्त्र) अहलेबैत का कहना, काम और तक़रीर है।

और चूँकि कई और भरोसे वाली रिवायतों के हिसाब से अहलेबैत की इमामों ने फरमाया है कि उनके फरमान रसूलुल्लाह (स0) की हदीसें हैं जो वह अपने बाप–दादा की बात दुहराते हैं। इस बुनियाद पर साफ है कि सच में उनके

फरमान पैग़म्बर (स0) की रिवायतें हैं। हम यह भी जानते हैं कि पैग़म्बर (स0) से भरोसे वाले लोगों की रिवायतें सभी इस्लामी आलिमों के यहाँ क़बूल की जाने वाली हैं।

इमाम मुहम्मद बाक़िर (अ0) ने फरमाया:

''يَا جَابِرُ اِنَّا لَوْ كُنَّا نُحَدِّثُكُمْ بِرَائِنَا وَهَوَانَا لَكُنَّا مِنَ الْهَالِكِيْنَ، وَلٰكِنَّا نُحَدِّثُكُمْ بِاَحَادِيْثِ نَكْنِزُهَا عَنْ رَسُوْلِ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَآلِهِ وَسَلَّمَ.''

[ऐ जाबिर! अगर हम अपनी राय और दिली ख़्वाहिशों (मनमानी) की बुनियाद पर तुम्हारे लिए कोई बात बयान करें तो हम तबाह होने वालों में हो जाएँगे। लेकिन हम तुम्हारे लिए ऐसी हदीसें नक़ल करते हैं जो हमने रसूले ख़ुदा (स0) से ख़ज़ाने की सूरत में जमा की हैं।]

(जामे अहादीसुश्शीआ जि–1 पे–18 मुक़द्दमात से ह–116)

इमाम जाफर सादिक़ (अ0) से मिली एक हदीस में आया है कि किसी ने इमाम (अ0) से सवाल किया और हज़रत ने जवाब दिया। उस शख़्स ने इमाम की राय बदलने की ग़र्ज़ से बहस शुरु कर दी तो इमामे सादिक़ (अ0) ने फरमाया:

''مَا اَجَبْتُکَ فِيْهِ مِنْ شَيْءٍ فَهُوَ عَنْ سُوْلِ اللّٰهِ.''

[मैंने तुझे जो जवाब दिया है वह पैग़म्बर (स0) की बात दुहराई है। (और उसमें बहस की गुन्जाइश नहीं है)।]

(उसूले काफी जि–1 पे–58 ह–121)

ग़ौर करने वाली बात है कि हदीस के सिलसिले में हमारे पास 'काफ़ी', 'तहज़ीब', 'इस्तेबसार', 'मन ला यह्ज़रुहुल

फक़ीह' और दूसरी भरोसे वाली किताबें मौजूद हैं, लेकिन हमारी नज़र में उनके भरोसे वाला होने का यह मतलब नहीं है कि उनमें मौजूद हर रिवायत हमारी नज़र में मानने वाली है, बल्कि रिवायतों के बारे में किताबों के साथ हमारे पास 'इल्मे रिजाल' (व्यक्ति–शास्त्र— जिसमें लोगों के चरित्र और उन पर भरोसे के कारण का पता चलता है।) की किताबें भी मौजूद हैं, जिनमें हर दर्जे के हदीस के रिवायत करने वालों पर चर्चा की गई है। हमारे नज़दीक वह रिवायत क़बूल करने वाली है जिसकी सनद (दुहराने वालों के क्रम) में बताए गए सभी लोग भरोसे और इत्मिनान वाले हों। इसलिए इन मशहूर और भरोसे वाली किताबों में जो रिवायतें इस शर्त वाली न हों वह हमारी नज़र में क़बूल की जाने वाली नहीं हैं।

इसके अलावा मुमकिन है कि कोई रिवायत ऐसी हो जिसकी सनद का सिलसिला भी सही हो लेकिन शुरु से लेकर आज तक हमारे बड़े–बड़े उलमा और फक़ीहों (धर्म विद्वान) ने उसे नज़रअन्दाज़ किया हो और उस पर अमल न किया हो और उन्हें इसमें कुछ दूसरी कमियाँ नज़र आई हों। इस तरह की रिवायत को हम ''मुअ्रिज़ अन्हा'' कहते हैं। ये हमारी नज़र में भरोसे वाली नहीं।

इस बुनियाद पर यह बात साफ है कि जो लोग हमारा अक़ीदा जानने के लिए सिर्फ और सिर्फ उन किताबों में मौजूद किसी रिवायत या कई रिवायतों का सहारा लेते हैं, उनकी सनद को जांचे बिना, उनका तरीक़ा ग़लत है।

कुछ मशहूर इस्लामी फिरक़ों में ''सिहाह'' के नाम से किताबें मौजूद हैं, जिनमें मौजूद रिवायतों का सही होना उन किताबों के लेखकों के यहाँ साबित है। और दूसरे लोग भी

इन रिवायतों को सही समझते हैं। लेकिन हमारे यहाँ मौजूद भरोसे वाली किताबें भी इस तरह नहीं। ये ऐसी किताबें हैं जिनके लेखक मशहूर और भरोसे वाले तो हैं, लेकिन इन किताबों में मौजूद रिवायत की सनद का सही होना 'इल्मे रिजाल' की किताबों की रौशनी में रिवायत करने वालों की जाँच--पड़ताल पर टिका हुआ है।

इस प्वाइन्ट पर ध्यान देने से हमारे अक़ीदों के बारे में पैदा होने वाले बहुत से सवालों का जवाब मिल सकता है। जिस तरह इससे आँख चुराना हमारे अक़ीदों की पहचान के सिलसिले में बहुत सी ग़लतफहमियों को जन्म दे सकता है।

बहरहाल कुर्आन मजीद की आयतें और पैग़म्बर (स0) की हदीसों के बाद हमारी नज़र में बारह इमामों की हदीसें भरोसे वाली हैं। शर्त यह है कि इमाम (अ0) से उन हदीसों का होना भरोसे वाले तरीक़े से साबित हो।



छठा चैप्टर

छठा चैप्टर

कुछ अलग-अलग मसले

पिछले चैप्टरों ने इस्लाम धर्म की बुनियादों के बारे में हमारे ख़याल, अक़ीदे और उसूलों को साफ कर दिया है। हमारे अक़ीदों की कुछ और ख़ास बातें हैं जो बयान की जाती हैं।

56- अच्छाई और बुराई का मसला

हमारा अक़ीदा है कि: इंसानी अक़्ल बहुत सी चीज़ों की अच्छाई और बुराई को समझ सकती है। अच्छाई और बुराई की यह पहचान की उस ताक़त की वजह से है जो ख़ुदा ने इंसान को दी है। इस बुनियाद पर आसमानी शरीअतों के उतरने से पहले भी कुछ मामले अक़्ल की वजह से इंसानों के लिये खुले हुए और साफ थे। जैसे इंसाफ और नेकी की अच्छाई, ज़ुल्म व ज़्यादती की बुराई और सही रास्ता दिखाना, ईमानदारी, बहादुरी और दरया दिली जैसी बहुत सी चाल--चलन की अच्छाई, इसी तरह झूठ, बेईमानी, कन्जूसी और इस तरह की दूसरी बातों की बुराई और घिनावनापन, उन मामलों में से हैं जिन्हें अक़्ल समझ सकती है। फिर भी अक़्ल सभी चीज़ों की अच्छाई व बुराई को समझ नहीं सकती और इंसान की जानकारी बहरहाल सीमित हैं इसलिए ख़ुदा की तरफ से इस मामले को पूरा करने के लिए अल्लाह के दीन, आसमानी किताबें और नबी भेजे गए, ताकि वे अक़्ली समझ का भी समर्थन करें और उन अन्धेरे कोनों को भी रौशन करें जिनके समझने से अक़्ल आजिज़ है।

अगर सच्चाइयों की पहचान के सिलसिले में हम अक़्ल की बात को सिरे से ही इन्कार कर दें तो फिर तौहीद, ख़ुदा की पहचान, नबियों का भेजा जाना और आसमानी दीनी की बात ही ख़त्म हो जाएगी, क्योंकि ख़ुदा के होने को मान लेना और नबियों की हिदायत की सच्चाई सिर्फ़ अक़्ल से ही साबित की जा सकती है। यह बात साफ़ है कि शरअी तालीम उसी सूरत में क़बूल की जाने वाली हैं जब यह दो उसूल (तौहीद और नुबुव्वत) पहले अक़्ली दलीलों से साबित हो चुके हों। सिर्फ़ शरअी दलील से ये दोनों बातें साबित नहीं हो सकती हैं।

57- अल्लाह का 'अद्ल' (उसके सब काम सही होते हैं, ग़लत, अनर्थ नहीं)

ऊपर बताई गई वजहों की बुनियाद पर हम ख़ुदा के आदिल होने का अक़ीदा रखते हैं और इस बात को नामुमकिन समझते हैं कि ख़ुदा अपने बन्दों पर ज़्यादती करे या बिना वजह किसी को सज़ा दे या बिना वजह किसी को माफ़ कर दे। यह नहीं हो सकता कि वह अपना वादा पूरा न करे या बुरे और गुनाहगार को अपनी तरफ़ से नुबुव्वत और रिसालत दे और उसे मोअजिज़े दे।

यह भी नहीं हो सकता है कि उसने अपने जिन बन्दों को भलाई के लिए पैदा किया है, उन्हें किसी रास्ता बताने वाले और रास्ता दिखाने वाले के बिना ही भटकते परेशान छोड़ दे, क्योंकि यह सब काम बुरे और ख़राब हैं, और ख़ुदा तआला के लिए बुरे कामों का होना मुमकिन नहीं है।

58– इंसान की आज़ादी

बताई गई वजहों के हिसाब से हमारा अक़ीदा है कि: खुदा ने इंसान को आज़ाद पैदा किया है। इंसान अपने इरादे और अपने मन की पसन्द से अपने कामों को करता है क्योंकि अगर इसका उलट हो यानी हम इंसानों को अपने कामों के करने में मजबूर बेबस मानें तो बुरों को सज़ा देना ज़ुल्म और नाइंसाफी होगी और नेक लोगों को अच्छा बदला देना बेहूदा और बेदलील काम होगा। इस तरह का काम ख़ुदा के लिए ठीक नहीं है।

निचोड़ यह कि अच्छाई और बुराई की पहचान और बहुत सी सच्चाइयों की पहचान में इंसानी अक़्ल की अपनी और प्राकृतिक ख़ूबी को मानना दीन व शरीअत और नबियों की नुबुव्वत और आसमानी किताबों पर ईमान लाने की बुनियादी शर्त है। लेकिन जिस तरह पहले कहा गया इन्सानी समझ और जानकारी सीमित हैं, सिर्फ उन्हीं के बलबूते पर नेकी और कमाल से जुड़ी सभी सच्चाइयों की पहचान नहीं हो सकती। इसी वजह से इंसान को नबियों के भेजे जाने और आसमानी किताबों की ज़रूरत है।

59– धर्म के मसले अक़्ल से भी निकाले जाते हैं

हमारा अक़ीदा है कि: इस्लाम दीन का एक बुनियाद अक़्ल है। अगर अक़्ल यक़ीनी तौर पर किसी चीज़ को समझे और उसके बारे में फैसला करे तो वह दीन होगा। मिसाल के लिए मान लें अगर (बतौर फर्ज़) क़ुर्आन और सुन्नत में ज़ुल्म व ख़यानत (घपला), झूठ, क़त्ल, चोरी और लोगों के हक़ बर्बाद करने के हराम होने पर कोई दलील न भी

होती तो हम अक़ली दलील से इनको हराम समझते और यक़ीन रखते कि उस जानने वाले समझदार (ख़ुदा) ने हम पर ये चीज़ें हराम कर दी हैं और वह उनके करने पर राज़ी नहीं है। अक़ल का यह हुक्म हमारे ऊपर अल्लाह की दलील गिना जाता है।

कुर्आन की आयतें ऐसी बातों से भरी पड़ी हैं जो अक़ल और अक़ली दलीलों की अहमियत को बताती हैं। तौहीद के रास्ते पर चलने के लिए कुर्आन ने अक़ल और समझ वालों को ज़मीन और आसमान में मौजूद ख़ुदा की निशानियों को समझने की अपील की है।

"اِنَّ فِی خَلْقِ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَاخْتِلَافِ اللَّیْلِ وَالنَّهَارِ لَاٰیَاتٍ لِّاُولِی الْاَلْبَابِ."

(सूरा 'आले इमरान' आयत 190)

दूसरी तरफ से इंसानी अक़ल व समझ में बढ़ोत्तरी को ख़ुदा की निशानियों के बयान का निशाना ठहराया है।

"اُنْظُرْ کَیْفَ نُصَرِّفُ الْاٰیَاتِ لَعَلَّهُمْ یَفْقَهُوْنَ."

[देखो हम अलग-अलग तरीक़ों से किस तरह अपनी निशानियाँ बयान करते हैं ताकि वह समझ ले।]

(सूरा 'अन्आम' आयत 65)

तीसरा प्वाइन्टः इन दोनों बातों के सिवा सभी इंसानों से चाहा गया है कि वे नेकियों और बुराईयों में पहचान करें। और इस सिलसिले में सोंचने की ताक़त से काम लें। इरशाद होता हैः

"قُلْ هَلْ یَسْتَوِی الْاَعْمٰی وَالْبَصِیْرُ اَفَلَا تَتَفَکَّرُوْنَ."

[क्या अंधा और देखने वाला (जानने वाला और न जानने

वाला) बरादर हैं? क्या तुम ग़ौर-फ़िक्र नहीं करते।]

(सूरा 'अन्आम' आयत 50)

चौथा और आख़री प्वाइन्ट: जो लोग अपने कानों, आँखों और ज़बान से काम नहीं लेते और अपनी अक़्ल व समझ से फ़ाएदा नहीं उठाते उन्हें ज़मीन पर चलने वालों में सबसे तुच्छ जानवर बताया गया है:

"اِنَّ شَرَّ الدَّوَآبِّ عِنْدَ اللّٰهِ الصُّمُّ الْبُكْمُ الَّذِيْنَ لَا يَعْقِلُوْنَ."

[ख़ुदा के यहाँ ज़मीन पर चलने वालों में सबसे बुरे वे बहरे और गूँगे लोग हैं जो अक़्ल से काम नहीं लेते।]

(सूरा 'अन्फ़ाल' आयत 22)

और भी बहुत सी आयतें इस बात को बताती हैं।

इन दलीलों के होते हुए इस्लाम के उसूल व फ़ुरूअ् के मामले में हम अक़्ल व समझ और सोंच विचार की कैसे अनदेखी कर सकते हैं?

60- अल्लाह के अद्ल पर एक नज़र

जैसा कि पहले इशारा किया जा चुका है हम ख़ुदा के आदिल होने पर अक़ीदा रखते हैं और यह यक़ीन रखते हैं कि ख़ुदा अपने किसी बन्दे पर कोई ग़लत अनर्थ नहीं करता क्योंकि ज़ुल्म एक बुरा और घिनावना काम है और ख़ुदा की ज़ात इस तरह के काम से परे है और पाक और साफ़ है।

"وَلَا يَظْلِمُ رَبُّكَ اَحَداً."

[तेरा ख़ुदा किसी पर ज़ुल्म (ग़लत अनर्थ) नहीं करता।]

(सूरा 'कहफ़' आयत 49)

अगर दुनिया और आख़िरत में कुछ लोगों को सज़ा

मिलेगी तो इसकी असल वजह वह खुद हैं।

"فَمَا كَانَ اللّٰهُ لِيَظْلِمَهُمْ وَلٰكِنْ كَانُوْا اَنْفُسَهُمْ يَظْلِمُوْنَ."

[खुदा ने (अल्लाह के अज़ाब में फंसने वाली पिछली क़ौमों पर) जुल्म नही किया बल्कि वे खुद अपने ऊपर जुल्म किया करते थे।]

(सूरा 'तौबा' आयत 70)

न सिर्फ इंसान बल्कि दुनिया की किसी चीज़ पर भी खुदा जुल्म नहीं करता।

"وَمَا اللّٰهُ يُرِيْدُ ظُلْمًا لِّلْعَالَمِيْنَ."

[खुदा दुनिया वालों पर जुल्म का हरगिज़ इरादा नहीं रखता।]

(सूरा 'आले इमरान' आयत 108)

याद रहे कि यह सभी हुक्म अक़्ल की तरफ रास्ता दिखा रहे हैं और उसी पर ज़ोर दे रहे हैं।

'तकलीफ माला युताक़' की नहीं

बताई गई वजहों की बुनियाद पर हमारा अक़ीदा है कि खुदा हरगिज़ 'तकलीफ माला युताक़' (इंसान की सकत से ज़्यादा कामों) का हुक्म नहीं देताः

"لَا يُكَلِّفُ اللّٰهُ نَفْسًا اِلَّا وُسْعَهَا."

(सूरा 'बक़रा' आयत 286)

61– ख़तरनाक हादसों के पीछे क्या?

हमारा अक़ीदा है कि इस दुनिया में जो भयानक बातें होती हैं (जैसे ज़लज़ले, मुसीबतें और मुश्किलें) बयान की गई वजहों की रौशनी में वह कभी तो खुदा की तरफ से सज़ा के तौर पर सामने आती हैं जैसा कि लूत के समुदाय के बारे में फरमाया गया हैः

''فَلَمَّا جَآءَ اَمْرُنَا جَعَلْنَا عَالِيَهَا سَافِلَهَا وَاَمْطَرْنَا عَلَيْهَا حِجَارَةً مِّنْ سِجِّيلٍ مَّنْضُوْدٍ.''

[जब अज़ाब के बारे में हमारा हुक्म आ गया तो हमने उनके शहरों को बर्बाद कर दिया और उन पर पत्थरों की मूसलाधार बारिश नाज़िल कर दी।] (सूरा 'हूद' आयत 82)

और ''सबा'' के बेकहे और नासमझ लोगों के बारे में इरशाद होता है:

''فَاَعْرَضُوْا فَاَرْسَلْنَا عَلَيْهِمْ سَيْلَ الْعَرِمِ.''

[उन्होंने ख़ुदा की इताअत (कहने पर चलने) से मुँह मोड़ लिया और हमने तबाही वाला सैलाब उनकी तरफ भेज दिया।]

(सूरा 'सबा' आयत 16)

वहीं उनमें से कुछ वाक़ेए इंसानों को जगाने की लिए होते हैं ताकि वह सच–सच्चाई के रास्ते की तरफ लौट आएँ।

''ظَهَرَ الْفَسَادُ فِى الْبَرِّ وَالْبَحْرِ بِمَا كَسَبَتْ اَيْدِى النَّ لِيُذِيْقَهُمْ بَعْضَ الَّذِىْ عَمِلُوْا لَعَلَّهُمْ يَرْجِعُوْنَ.''

[सूखे में और समुन्द्र में लोगों के कामों की वजह से ख़राबी सामने आ गई। ख़ुदा चाहता है कि उन्हें उनके कुछ करतूतों का मज़ा चखाए। शायद वे लौट आएँ।] (सूरा 'रूम' आयत 41)

इसलिए इस तरह की मुसीबतें हक़ीक़त में ख़ुदा के इनाम और मेहरबानी का नतीजा हैं।

कुछ मुसीबतें ऐसी हैं जो इंसान खुद अपने लिये पैदा कर लाता है। यानी वह अपनी ग़लतियों का फल भुगतता है।

''اِنَّ اللّٰهَ لَا يُغَيِّرُ مَا بِقَوْمٍ حَتّٰى يُغَيِّرُ مَا بِاَنْفُسِهِمْ.''

[बस यही कि अल्लाह (तआला) किसी क़ौम/समाज की हालत नहीं बदलता जब तक वह ख़ुद अपनी हालत को न बदले।]

(सूरा 'रअ़्द' आयत 11)

"مَآ اَصَابَکَ مِنْ حَسَنَةٍ فَمِنَ اللّٰهِ وَمَا اَصَابَکَ مِنْ سَيِّئَةٍ فَمِنْ نَفْسِکَ."

[जो नेकी तुझे नसीब हो वह ख़ुदा की तरफ से है (और उसकी मदद से है) और जो बुराई तुझे मिले वह ख़ुद तेरी तरफ से है।] (सूरा 'निसा' आयत 79)

62– दुनिया का सिस्टम सबसे बेहतरीन सिस्टम है

हमारा अक़ीदा है कि: दुनिया में बहुत ही ऊँचा निज़ाम संगठन है। यानि इस दुनिया के संगठन में जो भी हो सकता है उनमें सबसे अच्छा सिस्टम यही निज़ाम है जो हमारे सामने है। हर चीज़ हिसाब से है। इसके हक़, इंसाफ, बराबरी और नेकी के ख़िलाफ कोई बात मौजूद नहीं है। अगर इंसानी समाज में बुराईयाँ दिखाई पड़ती हैं तो ये ख़ुद उनकी तरफ से हैं।

हम यह बात दोहराते हैं कि हमारे अक़ीदे के हिसाब से विश्व के बारे में इस्लामी ख़याल की एक असली बुनियाद अल्लाह का 'अद्ल' है। इसके बिना तौहीद, नुबुव्वत, और मआद का अक़ीदा भी ख़तरे में पड़ जाता है। (ग़ौर कीजिये)

एक हदीस में आया है कि इमामे जाफर सादिक़ (अ0) ने पहले फरमाया:

"اِنَّ اَسَاسَ الدِّيْنِ التَّوْحِيْدُ وَالْعَدْلُ."

[दीन की बुनियाद तौहीद और 'अद्ल' हैं।]

इसके बाद फरमाया:

"اَمَّـا التَّوحِيدُ فَاَنْ لَا يَجُوْزَ عَلٰى رَبِّكَ مَا جَازَ عَلَيْكَ وَاَمَّا الْعَدْلُ فَاَنْ لَا تَنْسِبَ اِلٰى خَالِقِكَ مَا لَامَكَ عَلَيْهِ."

[तौहीद यह है कि जो बातें तेरे लिए हैं उन्हें तुम ख़ुदा के लिए न समझो (उसे मुमकिनात की सभी ख़ूबियों संसार वाले सभी गुणों से परे, पाक व साफ समझो)। और 'अद्ल' यह है कि तुम ख़ुदा की तरफ किसी ऐसे काम को न धर दो जिसे अगर तुम करते तो वह उस पर तुम्हारी बुराई करे।] (ग़ौर कीजिये।)

(बिहारुलअनवार जि–5 पे–17 ह–23)

63– 'फिक़ह' (धर्मविधि–शास्त्र) के चार स्रोत

जैसा कि पहले भी इशारा किया जा चुका है कि हमारे धर्म के नियम निकालने के चार स्रोत (आधार) हैं:

1– "अल्लाह की किताब" यानि क़ुर्आन मजीद जो इस्लामी पहचान और उसके हुक्मों/आदेशों की बुनियाद है।

2– पैगम्बर और मासूम इमाम (अ0) (अह्लेबैत) की सुन्नत (सदावृत्ति)।

3– उलमा और धर्म के क़ानूनों के जानकार समझने वालों (फ़क़ीहों) का इजमाअ व इत्तेफाक़ (एकमत, एका) जो मासूम की राय से हो।

4– अक़ल, अक़ल या अक़ली दलील: इससे मुराद यक़ीनी और बस अक़ली दलील है। जो दलीले अटकली हो (जैसे क़यास, इस्तेहसान वग़ैरा) वे हमारे यहाँ किसी भी दीनी नियम के मसले में मानने के क़ाबिल नहीं है। इसलिए अगर फक़ीह अटकल से एक चीज़ में वजह देखे लेकिन इसके बारे में किताब व सुन्नत में कोई ख़ास हुक्म न हो तो वह

अपनी अटकल को ख़ुदा के हुक्म के तौर पर पेश नहीं कर सकता। इस तरह शरअी हुक्मों को निकालने के लिए 'क़यास' (अटकल) और इस तरह की चीज़ों का सहारा लेना हमारे यहाँ जाएज़ नहीं है। लेकिन जिन जगहों पर इंसान को यक़ीन हो जाए (जैसे ज़ुल्म, झूठ, चोरी और बेईमानी की बुराई का यक़ीन) तो इन जगहों पर अक़्ल का हुक्म सही है। अक़्ल का बिलकुल से यही हुक्मः

"كُلُّ مَا حَكَمَ بِهِ الْعَقْلُ حَكَمَ بِهِ الشَّرْعُ."

[**अक़्ल जिस चीज़ का हुक्म दे शरीअत का हुक्म भी वही होगा।**]

के क़ाएदे के लेहाज़ से शरअी हुक्म में होगी।

सच्चाई यह है कि इबादत, राजनीति, कारोबार और समाज से जुड़े मामलों में मुकल्लफ लोगों (जिन पर धर्म का हुक्म लागू हो) के लिए ज़रूरी मसलों के बारे में पैग़म्बर और मासूम इमामों की हदीसें हमारे यहाँ मौजूद हैं। हमें 'ज़न' (अक़्ल के झुकाव) पर बनाई गई दलीलों की कोई ज़रूरत नहीं है। यहाँ तक कि हमारा यह अक़ीदा है कि वे मसले जो वक़्त गुज़रने के साथ-साथ इंसान के सामने आते हैं उनकी पहचान के सिलसिले में भी ख़ुदा की किताब और रसूल व इमामों की सुन्नत में उसूल क़ाएदे और नियम बता दिये गए हैं, जिनके बाद हमें इस तरह की अटकल-पच्चू दलीलों की ज़रूरत नहीं रहती। यानि उन क़ाएदों और क़ानूनों को देखने समझने से सामने आने वाले मसलों का हुक्म मालूम हो जाता है। (इस मसले की ज़्यादा बात की गुन्जाईश इस छोटी से किताब में नहीं है)।[1]

---

(1) किताब "अलमसाएलुल मुस्तहदिसा" में हमने यह बात तफसील से बयान की है।

64– इज्तेहाद का दरवाज़ा हमेशा के लिए खुला है

हमारा अक़ीदा है कि: शरीअत के सभी मसलों में इज्तेहाद का दरवाज़ा खुला हुआ है। सभी समझ वाले फ़क़ीह बताए गए चार फ़िक़ही स्रोतों से खुदा के हुक्म निकाल सकते हैं और उन लोगों के सामने रख सकते हैं जो मसले निकालने की सलाहियत और योग्यता नहीं रखते, चाहे उनकी राय पिछले फ़क़ीहों की राय से मेल न खाती हों।

हमारा अक़ीदा है कि: जो लोग फ़िक़ह में समझ नहीं रखते उनको हमेशा ऐसे ज़िन्दा फ़क़ीहों से मालूम करना चाहिए जो समय की ज़रूरतों और मसलों की जानकारी रखते हों। यानि उनकी तक़लीद करें। फ़िक़ह को न जानने वाले लोगों को फ़िक़ह के माहिर विद्वानों से मालूम करना (और उनकी राय पर चलना) हमारे यहाँ एक खुली हुई ज़रूरत है। इन फ़क़ीहों को मरजए–तक़लीद कहते हैं। इसी तरह हम मरे हुए फ़क़ीह की तक़लीद को बिलकुल जाएज़ नहीं समझते। लोगों को ज़िन्दा फ़क़ीह की तक़लीद करना चाहिए ताकि फ़िक़ह हमेशा तरक़्क़ी और कमाल की तरफ बढ़ती रहे।

65– क़ानून बनाने की ज़रूरत नहीं

हमारा अक़ीदा है कि: इस्लाम में क़ानूनी खोखलापन नहीं है। यानि इस्लाम ने क़यामत तक इंसान के लिए ज़रूरी हुक्मों को बता दिया है, अलबत्ता कभी किसी ख़ास सूरत, परिस्थिति में और कभी आम और कुल्ली (सूत्री) हुक्म से निकलने वाले निचले हुक्मों उपनियमों के लिए। इसी वजह से हमारे यहाँ फ़क़ीहों को क़ानून बनाने का हक़ नहीं है। बल्कि हम उनकी ज़िम्मेवारी समझते हैं कि वह ऊपर बताए गए चार स्रोतों

से हुक्म निकालें और सबके सामने रखें। क्या खुद कुर्आन ने सूरा 'माएदा' (जो पैग़म्बरे इस्लाम पर उतरने वाला आख़री सूरा या आख़री सूरों में से एक है) में यह नहीं फरमाया:

"اَلْيَوْمَ اَكْمَلْتُ لَكُمْ دِيْنَكُمْ وَاَتْمَمْتُ عَلَيْكُمْ نِعْمَتِى وَرَضِيْتُ لَكُمُ الْاِسْلَامَ دِيْناً."

[आज मैंने तुम्हारे लिए तुम्हारा दीन (धर्म) पूरा कर दिया और तुम पर अपनी नेमत पूरी कर दी और इस्लाम को तुम्हारे दीन के तौर पर क़बूल कर (मान) लिया?] (सूरा 'माएदा' आयत 3)

अगर इस्लाम सब ज़मानों के लिए भरपूर फिक़ही हुक्मों वाला न होता तो वह पूरा दीन कैसे हो सकता है?

क्या हम पैग़म्बर (स0) की यह हदीस नहीं देखते:

"يَا اَيُّهَا النَّاسُ وَاللّٰهِ مَا مِنْ شَيْءٍ يُقَرِّبُكُمْ مِنَ الْجَنَّةِ وَيُبَاعِدُكُمْ عَنِ النَّارِ اِلَّا وَقَدْ اَمَرْتُكُمْ بِهِ وَمَا مِنْ شَيْءٍ يُقَرِّبُكُمْ مِنَ النَّارِ وَيُبَاعِدُكُمْ عَنِ الْجَنَّةِ اِلَّا وَقَدْ نَهَيْتُكُمْ عَنْهُ."

[ऐ लोगो! हर वह चीज़ जो तुमको जन्नत से क़रीब करती है और जहन्नम की आग से दूर करती है मैंने तुम्हें उसका हुक्म दिया है और हम वह चीज़ जो तुम्हें जहन्नम की आग से क़रीब करती है और जन्नत से दूर करती है मैंने तुम्हें उस से रोका है।]

('उसूले काफी' जि-2 पे-74 और बिहारुलअनवार जि-67 पे-96)

हज़रत इमाम जाफर सादिक़ (अ0) की एक और मशहूर हदीस है:

"مَا تَرَكَ عَلِيٌّ شَيْئاً اِلَّا كَتَبَهُ حَتّٰى اَرْشَ الْخَدْشِ."

[हज़रत अली (अ0) ने इस्लाम का कोई ऐसा हुक्म नहीं

छोड़ा जिसे आप (अ0) ने (हुजूर स0 के हुक्म से और आपके लिखवाने पर) लिख न लिया हो। यहाँ तक कि एक मामूली सी खरोंच (कि जो इंसान के बदन पर आती है) की दियत (जुर्माना) भी।][1]

इस बुनियाद पर अटकल की बुनियाद पर दलीलें और 'क़यास' व 'इस्तेहसान' की ज़रूरत ही सामने नहीं आती।

66– तक़ैया और इसका फलसफा

हमारा अक़ीदा है कि: जब भी इंसान फिरक़ापरस्त (सम्प्रदायिक), हठधरम और बेवकूफों की बीच इस तरह फंस जाए कि उनके बीच अपने अक़ीदे को ज़ाहिर करना उसके जानी या माली ख़तरे की वजह हो और अक़ीदे के ज़ाहिर करने का कोई ख़ास फाएदा भी न हो तो वहाँ उसकी ज़िम्मेदारी है कि अपने अक़ीदे को ज़ाहिर न करे और अपनी जान न गंवाए। इस का नाम ''तक़ैया'' है। हमने यह बात कुर्आन मजीद की दो आयतों और अक़्ली दलील से निकाली है।

कुर्आन ''मोमिन आले फिरऔन'' (फिरऔन के मोमिन साथी) के बारे में फरमाता है:

''وَقَالَ رَجُلٌ مُّؤْمِنٌ مِّنْ آلِ فِرْعَوْنَ يَكْتُمُ إِيمَانَهُ أَتَقْتُلُونَ رَجُلاً أَنْ يَقُولَ رَبِّيَ اللهُ وَقَدْ جَائَكُمْ بِالْبَيِّنَاتِ مِنْ رَّبِّكُمْ.''

[फिरऔन वालों में से एक मोमिन मर्द ने जो अपना ईमान छुपाता था (मूसा का बचाव करते हुए) कहा: क्या तुम उस मर्द को क़त्ल करना चाहते हो जो यह कहता है कि मेरा पालने वाला ख़ुदा

(1) 'जामेउल अहादीस' जि–1 पे–18 ह–127 (इसी किताब में इसी सिलसिले की और भी रिवायतें आयीं हैं)।

है? हालाँकि तुम्हारे रब की तरफ से खुली दलीलें लेकर आया है।]

(सूरा 'मोमिन' आयत 28)

"يَكْتُمُ إِيْمَانَهُ" का जुमला (वाक्य) खुले लफ़्ज़ों में तक़ैया का मसला बता रहा है। क्या यह ठीक था कि मोमिन आले फ़िरऔन अपना ईमान ज़ाहिर करते और अपनी जान से हाथ धो बैठते जबकि कोई फाएदा भी न होता?

शुरु इस्लाम के कुछ मुजाहिद और बहादुर मोमिन जो फ़िरक़ापरस्त मुश्रिकों के चंगुल में फंस चुके थे को उनको तक़ैय्या का हुक्म देते हुए कुर्आन यूँ फरमाता है:

"لَا يَتَّخِذِ الْمُؤْمِنُوْنَ الْكَافِرِيْنَ اَوْلِيَآءَ مِنْ دُوْنِ الْمُؤْمِنِيْنَ وَمَنْ يَفْعَلْ ذٰلِكَ فَلَيْسَ مِنَ اللّٰهِ فِيْ شَيْءٍ اِلَّآ اَنْ تَتَّقُوْا مِنْهُمْ تُقٰةً."

[ईमान वाले लोग मोमिनों को छोड़कर काफ़िरों को अपना ज़िम्मेदार और दोस्त न बनाएँ जो ऐसा करेगा उसका खुदा से कोई नाता न होगा मगर यह कि (तुम ख़तरे के वक़्त) उनसे तक़ैय्या करो।] (सूरा 'आले इमरान' आयत 28)

इस बुनियाद पर तक़ैया यानी अक़ीदे को छुपाना वहाँ जाएज़ है जहाँ इंसान की जान, माल और मान-मर्यादा, इज़्ज़त को फ़िरक़ापरस्त (सम्प्रदायी) और हठधरम दुश्मनों से ख़तरा हो और वहाँ अक़ीदे को ज़ाहिर करने का फाएदा भी कुछ न हो। ऐसे मौक़ पर बिना वजह इंसान को ख़तरे में डालना और अफ़रादी ताक़त (Man Power) को बर्बाद करना सही नहीं है, न ही समझदारी की बात है। बल्कि उसे बचाए रखना चाहिए ताकि ज़रूरत के वक़्त काम आए। इसीलिए हज़रत इमाम जाफ़र सादिक़ (अ0) की मशहूर हदीस है:

"اَلتَّقِيَّةُ تَرْسُ الْمُؤْمِنِ."

[तक़ैय्या मोमिन की ढाल है।][1]

यहा तरस (ढाल) का इस्तेमाल इस बारीक प्वाइन्ट की तरफ इशारा है कि तक़ैया दुश्मन के मुक़ाबले में बचाव का एक रास्ता है।

मुश्रिकों के मुक़ाबले में अम्मार यासिर के तक़ैया करने और पैग़म्बर (स0) की तरफ से उस पर उनकी ताईद (समर्थन) फरमाने का वाक़ेआ बहुत मशहूर है।[2]

जंग के मैदानों में दुश्मन से हथियार और सिपाहियों को छुपाना और जंगी राज़ों को छुपाए रखना आदि ये सब के सब इंसानी ज़िन्दगी में एक तरह का तक़ैया हैं। बहर हाल जहाँ सच्चाई को ज़ाहिर करना ख़तरे या नुक़सान की वजह बने और इससे कोई फाएदा भी न हो वहाँ तक़ैया करना (यानी अपना धर्म छुपाना) एक अक़्ली और शरअी हुक्म है जिस पर न सिर्फ शीआ बल्कि दुनिया के सभी मुसलमान, बल्कि दुनिया के सभी अक़लमन्द ज़रूरत के वक़्त चलते हैं।

इसके बाद भी ताज्जुब की बात है कि कुछ लोग तक़ैया को शीओं और अहलेबैत (अ0) के साथ ख़ास समझते हैं और उसे उनके ख़िलाफ एक बड़े एतेराज़ के तौर पर

---

(1) वसाएल जि–11 पे–461 ह–6 बा–24। कुछ हदीसों में "تُرْسُ اللّٰهِ فِي الْأَرْضِ." [ज़मीन में ख़ुदा की ढाल] आया है।

(2) बहुत से मुफस्सिर, तारीख़ लिखने वाले और हदीस लिखने वालों ने अपनी मशहूर किताबों में यह हदीस लिखी है। वाहिदी ने 'अस्बाबुन नुज़ूल' में और तबरी, कुरतुबी, ज़मख़शरी, फ़ख़्रुद्दीन राज़ी, बैज़ावी और नीशापूरी ने अपनी अपनी तफसीर की किताबों में (सूरः नहल की आयत 106 के बयान में) इसका बयान किया है।

इस्तेमाल करते हैं। हालाँकि बात बिलकुल साफ है। तक़ैया का स्रोत कुर्आन, सुन्नत, नबी के सहाबियों का चरित्र और दुनिया के सभी अक़्लमन्दों का तरीक़ा है।

67– तक़ैया कहाँ हराम है?

हमारा अक़ीदा है कि: बताए गए बुरे ख़यालों की वजह शीआ अक़ीदों की सही जानकारी न होना या शीओं से दुश्मनी रखने वाले लोगों से शीआ अक़ीदे पता करना है। हमारा ख़याल है कि ऊपर की गई वज़ाहत से बात पूरी तरह साफ हो गई।

अलबत्ता इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि कुछ जगहों पर तक़ैया हराम है। यह वहाँ है जहाँ तक़ैया करने से दीन, इस्लाम और कुर्आन की बुनियाद या इस्लामी क़ानूनों को ख़तरा हो। ऐसी जगहों पर अक़ीदे का ज़ाहिर करना ज़रूरी है, चाहे इंसान इस अक़ीदे को ज़ाहिर करने की वजह से जान से हाथ धो बैठे। हमारा अक़ीदा है कि आशूरा के दिन कर्बला में इमाम हुसैन (अ0) ने इसी ख़याल पर चले क्योंकि बनी उमैय्या के सम्राटों ने इस्लाम की बुनियाद को ख़तरे में डाल दिया था। इमाम हुसैन (अ0) के उठ खड़े हो जाने ने उनके करतूतों पर से पर्दा उठा दिया और इस्लाम को ख़तरे से बचा लिया।

68– इस्लामी इबादतें

कुर्आन और सुन्नत ने जिन इबादतों पर ज़ोर दिया है हम उन पर अक़ीदा (विश्वास) रखत हैं और उनसे जुड़े बन्धे हैं, जैसे पाँच वक़्त की नमाज़ें, जो पैदा करने वाले और पैदा होने वालों के बीच लगाव की अहम कड़ी हैं। इसी तरह

रमज़ान मुबारक के रोज़े जो ईमान की मज़बूती, मन की सफ़ाई, और तक़्वे (संयम) का बेहतरीन रास्ता हैं और दिली चाहतों (लालसा) के मुक़ाबले का हथियार हैं।

हम 'इस्तेताअत' वाले (जिनके पास इतनी पूँजी और सकत है कि अपना और अपने घराने का पेट काटे बिना हज कर सकते हैं) लोगों पर ज़िन्दगी में एक बार अल्लाह के घर के हज को वाजिब समझते हैं। यह तक़्वा अपनाने और आपसी मेल-मुहब्बत के बन्धनों को मज़बूत करने का एक असरदार ज़रिया है और मुसलमानों की इज़्ज़त और धाक की वजह है। हम ज़कात के माल, ख़ुम्स, भलाई का हुक्म देने (कहने) और बुराई से रोकने और इस्लाम और मुसलमानों पर हमला करने वालों के ख़िलाफ़ जेहाद* को भी माने हुए वाजिब कामों में गिनते हैं।

हमारे और कुछ दूसरे इस्लामी फ़िरक़ों के बीच इन मसलों के कुछ टुकड़ों में अलगाव और मतभेद है, बिलकुल उसी तरह जिस तरह अहले सुन्नत के चार फ़िरक़े भी इबादत और दूसरे इस्लामी हुक्मों में आपसी अलगाव रखते हैं।

69- दो नमाज़ों का साथ पढ़ना

हमारा अक़ीदा है कि: नमाजे 'ज़ोहर' व 'अस्र' या 'मग़रिब' व 'इशा' को एक साथ पढ़ना जाएज़ है (हालांकि उन्हें अलग-अलग वक़्त में पढ़ना बहुत बढ़िया और बेहतर है)। हमारा अक़ीदा है कि: नबी की तरफ़ से दो नमाज़ों को एक साथ पढ़ने की इजाज़त उन लोगों को सामने रखकर है जो

*अल्लाह के रास्ते में जान-माल, हाथ-पैर, और सोच विचार और ज़बान क़लम से जतन करना जिहाद है, केवल हथियार से लड़ाई जिहाद नहीं।

कठिनाइयों में फंसे हुए हैं।

सही तिरमिज़ी में इब्ने अब्बास से इस तरह रिवायत है कि:

"جَمَعَ رَسُوْلُ اللّٰـهِ بَيْـنَ الظُّهْـرِ وَالْعَصْرِ وَبَيْنَ الْمَغْرِبِ وَالْعِشَـاءِ بِالْمَدِيْنَةِ مِنْ غَيْرِ خَوْفٍ وَلَا مَطَرٍ، قَالَ فَقِيْلَ لِابْنِ عَبَّاس مَا اَرَادَ بِذٰلِکَ؟ قَالَ اَرَادَ اَنْ لَا يُحْرِجَ اُمَّتَهُ."

[मदीनें में पैग़म्बर (स0) ने ज़ोहर और अस्र की नमाज़ एक साथ पढ़ीं और मग़रिब व इशा की नमाज़ भी एक साथ पढ़ीं हालाँकि न कोई ख़तरा था और न बारिश थी। इब्ने अब्बास से पूछा गया कि इस काम से आप (स0) का क्या मक़सद था? तो उन्होंने जवाब दिया: ताकि अपनी उम्मत (समुदाय) को मुश्किल में न डालें (यानि जिस जगह पर दोनों नमाज़ों को अलग-अलग पढ़ना परेशानी की वजह हो वहाँ इस इजाज़त से फाएदा उठाया जाए।][1]

ख़ास कर इस ज़माने में जब समाजी ज़िन्दगी ख़ासकर कारख़ानों और व्यस्त कामकाज़ बिज़नेस और Industry में बड़ी गम्भीर हो चुकी है और पाँच अलग-अलग वक़्तों में नमाज़ के बन्धन की वजह से कुछ लोगों ने नमाज़ को बिलकुल ही छोड़ दिया है। पैग़म्बर (स0) ने यह जो इजाज़त दी है इससे फाएदा उठाते हुए नमाज़ को ज़्यादा पाबन्दी से अदा किया जा सकता है।

70– मिट्टी पर सजदा

हमारा अक़ीदा है कि: मिट्टी या ज़मीन के दूसरे

(1) सु-नने तिरमिज़ी जि-1 पे-354 बा-138 और सु-नने बैहक़ी जि-3 पे-167

हिस्से पर सजदा करना चाहिए या उन चीज़ों पर जो ज़मीन से उगती हों जैसे पेड़ों के पत्ते और लकड़ी और दूसरे पौधों पर सिवाए उन चीज़ों के जो खाई जाती हैं या पहनने के काम आती है।

इसलिए क़ालीन वग़ैरा पर सजदा करना जाएज़ नहीं है। हम मिट्टी पर सिजदा करने को सब चीज़ों से आगे रखते हैं, (बढ़ा हुआ समझते हैं।) इसी लिए आसानी की वजह से बहुत से शीआ साँचे में ढला हुआ पाक मिट्टी का टुकड़ा अपने पास रखते हैं जिसे सजदागाह कहते हैं और उस पर सजदा करते हैं। यह पाक भी है और मिट्टी भी।

इस सिलसिले में हमारी दलील पाक नबी (स0) की यह मशहूर हदीस है।

''جُعِلَتْ لِیَ الْاَرْضُ مَسْجِداً وَّطَهُوراً.''

हम यहाँ सिर्फ मस्जिद को ''सजदे की जगह'' के माने में लेते हैं। यह हदीस बहुत सी सहीह और दूसरी किताबों में आई है।[1]

यह कहा जा सकता है कि इस हदीस में मस्जिद से मुराद सजदे की जगह नहीं है बल्कि इससे मुराद नमाज़ की जगह है। और यह लोगों के अमल की 'नहीं' करती है जो सिर्फ एक ख़ास जगह पर नमाज़ पढ़ते हैं। लेकिन इस बात को देखते हुए कि यहा तहूर यानी ''तयम्मुम की मिट्टी'' की

---

(1) 'बुख़ारी' ने अपनी सही में जाबिर बिन अब्दुल्लाह अन्सारी से बाबु 'तयम्मुम' (जि–1 पे–91) में, नेसाई ने अपनी सही में जाबिर बिन अब्दुल्लाह से बाबु 'तयम्मुम बिस्सअीद' में इसे लिखा है। मुस्नद अहमद में यह हदीस इब्ने अब्बास से दुहराई गई है। (देखिये जि–1 पे–301) शीआ किताबों में यह भी पैग़म्बर (स0) से यह रिवायत अलग–अलग सनदों के साथ लिखी मिलती है।

बात आई है यह साफ नज़र आता है कि यहाँ इस (मस्जिद) से मुराद सजदा है, यानी ज़मीन की मिट्टी तहूर भी है और सजदा करने की जगह भी।

इसके अलावा अहलेबैत के इमामों (अ0) से बहुत सी रिवायतें आयीं हैं जिनमें मिट्टी और पत्थर वग़ैरा को सजदा की जगह ठहराया गया है।

71- नबियों और इमामों के रौज़े और मज़ारें ज़ियारत

हमारा अक़ीदा है कि: पैग़म्बर (स0), इमाम अलैहिमुस्सलाम, बड़े उलमा, दानिश्वरों (बुद्धिजीवियों) और हक़ (सच, सच्चाई और ख़ुदा) के रास्ते में शहीद होने वालों के मज़ारों की ज़ियारत सुन्नत मोक्कदा (ऐसी सुन्नत जिस पर बड़ा ज़ोर दिया गया है) है।

अहलेसुन्नत की किताबों में नबी (स0) के मुबारक रौज़े की ज़ियारत करने के बारे में अनगिनत रिवायतें मौजूद हैं। शीआ किताबों में भी यह बात मौजूद है। अगर इन रिवायतों को इकटठा कर दिया जाए तो एक अलग किताब बन सकती है।[1]

हर समय के सभी बड़े उलमा और लोगों की सभी टुक्ड़ियों, दलों ने इसको अहमियत दी है। किताबें उन लोगों की तज़किरों से भरी पड़ी हैं जो रसूल (स0) या दूसरे बुज़ुर्गों के मज़ारों की ज़ियारत के लिए जाते थे।[2] बहरहाल यह कहा

---

(1) इन रिवायतों की जानकारी लेने और इसी तरह ज़ियारत के सिलसिले में बुज़ुर्गों के कलमात और हालात देखने के लिए अलग़दीर जि-5 पे-93 ता 207 को देखें।

(2) इन रिवायतों को जानने के लिए और ज़ियारत के बारे में बुज़ुर्गों की बातों और हालात के मुताले के लिए पिछले हवाले (किताब)को देखें।

जा सकता है कि इस मसले पर सभी मुसलमानों का ऐका और एकमत है।

यह बात साफ है कि ज़ियारत और इबादत के बीच फर्क़ को नहीं भूलना चाहिए। इबादत और पूजा साधना ख़ुदा के लिए ख़ास है जबकि ज़ियारत का मक़सद दीनी बुज़ुर्गों (धर्म के बड़ों) की इज़्ज़त, उनकी याद को ज़िन्दा रखना और ख़ुदा के सामने उनसे 'शिफाअत' (सिफारिश) चाहना है। यहाँ तक कि कुछ रिवायतों के मुताबिक़ ख़ुद आप (स0) क़ब्र वालों की ज़ियारत के लिए जन्नतुल बक़ी जाते और उनके लिए रहमत और माफ़ी की दुआ करते थे।[1]

इस बुनियाद पर इस्लामी फिक़ह के ख़याल से इस काम के जाएज़ होने में किसी को शक शुब्हा नहीं करना चाहिए।

72– अज़ादारी की रसमों का फलसफा

हमारा अक़ीदा है कि इस्लामी शहीदों ख़ास तौर से कर्बला के शहीदों की अज़ादारी और उनका सोग मनाने का मक़सद उनकी याद को ज़िन्दा रखना और इस्लाम के रास्ते में उनकी कुर्बानियों का प्रचार है। इसी लिए हम अलग–अलग दिनों ख़ास तौर से आशूर के दिनों (मुहर्रम के पहले दस दिन) में अज़ादारी करते हैं जो प्यारे रसूल (स0) की प्यारी बेटी फातिमा ज़हरा (स0) और हज़रत अली (अ0) के जिगर के

---

(1) यह रिवायत सही मुस्लिम, अबुदाऊद, नेसाई, मुस्नद अहमद, सही तिरमिज़ी और सुनने बैहक़ी में देखी जा सकती है।



टुकड़े, जन्नत के जवानों के सरदार[1] इमाम हुसैन (अ0) की शहादत के (शहीदी) दिन हैं। हम उनकी ज़िन्दगी और उनके कारनामों का बयान करते हैं, उनके इरादों पर बात करते हैं और उनकी पाक रूह पर दुरूद और सलाम भेजते हैं।

हमारा अक़ीदा है कि: बनी उमैया ने एक बड़ी ख़तरनाक हुकूमत की नींव रखी थी। नबी (स0) की बहुत सी सुन्नतों को उन्होंने बदल दिया था और इस्लामी शान के ख़ातमे पर कमर बाँध ली थी।

यज़ीद एक खुला पापी, गुनाहगार, सरफिरा, घमण्डी और इस्लाम से दूर (पराया) आदमी था। लेकिन बदक़िस्मती से वह इस्लामी ख़िलाफत पर क़ब्ज़ा किये हुए था। सन् 61 हिजरी/680 ई0 में इमाम हुसैन (अ0) उससे मोर्चा लेने उठ खड़े हुए। यूँ तो वह और उनके सारे साथी इराक़ में कर्बला नामी जगह पर शहीद कर दिये गये और उनकी औरतें बन्दी बना ली गयीं लेकिन उनके ख़ून ने उस समय के सभी मुसलमानों में एक हैरत भरा जोश और उमंग भरा जज़्बा (भावना) पैदा कर दिया। बनी उमैया के ख़िलाफ एक के बाद एक बग़ावतें शुरु होने लगीं। इन बग़ावतों ने बनी उमैया के ज़ुल्म व ज़्यादती के महलों को हिलाकर रख दिया। आख़िरकार उनका नापाक वजूद ख़त्म हो गया। ध्यान देने की बात है कि

---

(1) "اَلْحَسَنُ وَالْحُسَيْنُ سَيِّدَا شَبَابِ اَهْلِ الْجَنَّةِ." (हसन व हुसैन जन्नत के जवानों के सरदार हैं)। यही हदीस सही तिरमिज़ी में अबु सईद खुज़री और हुज़ैफा से रिवायत (दुहराई गई) है। और सही इब्ने माजा बाब फज़ाएल्ल असहाबे रसूलुल्लाह, मुस्तदरक सहीहैन, हुलियतुल औलिया, तारीख़े बग़दाद, इसाबह (इब्ने हजर), कन्जुल उम्माल, ज़ख़ाएरुल उक़बा और दूसरी बहुत सी किताबों में लिखी है।



आशूरा के वाक़ेए/घटना के बाद बनी उमैया के राज के ख़िलाफ जितनी बग़ावतें हुई सबके नारे थे:-

[आले मुहम्मद (स0) की मर्ज़ी के लिए] "اَلرِّضَا لِاٰلِ مُحَمَّدٍ"

और

[ऐ हुसैन (अ0) के ख़ून का बदला लेने वालों] "يَا لِثَارَاتِ الْحُسَيْنِ."

यहाँ तक कि उनमें से कुछ नारे तो बनी अब्बास के शुरुआती दौर में भी उठते रहे।(1)

इमाम हुसैन (अ0) का ख़ूँनी क़याम (उठ खड़ा होना/Uprising) आज हम शीओं के लिए हर तरह के ज़ोर–ज़्यादती या सीनाज़ोरी और ज़ुल्म का मुक़ाबला करने के लिए अमल का एक नमूना (Role model) और काम का प्लान (Action-Plan) बन चुका है।

"هَيْهَاتَ مِنَّا الذِّلَّةُ."

[हम हरगिज़ ज़िल्लत बेइज़्ज़ती नहीं ले सकते।]

---

(1) अबुमुस्लिम ख़ुरासानी जिसने बनी उमैया की हुकूमत का ख़ात्मा किया, ने मुसलमानों की हमदर्दियाँ हासिल करने के लिए ".الرِّضَا لِاٰلِ مُحَمَّد" का नारा लगाया।

(कामिल इब्ने असीर जि–5 पे–372)

'तव्वाबीन' (तौबा पाश्चाताप करने वाले) भी ".لِثَارَاتِ الْحُسَيْنِ" का नारा देकर उठे थे।

(अलकामिल जि–4 पे–175)

मुख़्तार बिन अबु उबैदा सक़फ़ी भी इसी नारे के साथ उठे थे।

(अलकामिल इब्ने असीर जि–4 पे–288)

बनी अब्बास के ख़िलाफ जो लोग खड़े हुए उनमें से एक फ़ख़ के शहीद हुसैन बिन अली हैं। उन्होंने अपना मक़सद एक जुमले में इस तरह कहा:

"وَاَدْعُوْكُمْ اِلَى الرِّضَا مِنْ اٰلِ مُحَمَّدٍ."

[मैं तुम्हें आले मुहम्मद की ख़ुशी पाने की ओर न्योता देता (बुलाता) हूँ।]

(मक़ातिलुत तालिबीन पे–299 और तारीख़े तबरी जि–9 पे–194)

और:

"اِنَّ الْحَيَاةَ عَقِيْدَةٌ وَجِهَادٌ."

[ज़िन्दगी ईमान और जेहाद से मिली हुई है।]

के नारों ने, जो कर्बला के खूनी आन्दोलन का इनाम हैं, हमारी हमेशा मदद की है ताकि हम ज़ालिम, जाबिर अत्याचारी हुकूमतों के ख़िलाफ उठ खड़े हों और सैय्यदुश्शोहदा इमाम हुसैन (अ0) और उनके साथियों के रास्ते पर चलते हुए ज़ालिम की बुराई को दूर करें।

(ईरान के इस्लामी इन्क़िलाब में ये नारे हर तरह सुनाई देते हैं)।

बस इस्लाम के शहीदों, ख़ास कर कर्बला के शहीदों की याद जगाने से हमारे अन्दर अक़ीदे और ईमान के रास्ते में शहादत, कुर्बानी, बहादुरी और निछावर करने का जज़्बा (भावना) हमेशा जागता रहता है। यह हमें इज़्ज़त से जीने और जुल्म के आगे सर न झुकाने का सबक़ देता है। यह है उन वाक़ेओं को ज़िन्दा रखने और हर साल अज़ादारी का सिलसिला बाक़ी रखने का फलसफा।

हो सकता है कुछ लोगों को मालूम न हो कि हम अज़ादारी की रसमों में क्या करते हैं और वे इसे इतिहास का एक ऐसा क़िस्सा समझें जिस पर वक़्त से भूल की गर्द पड़ी हुई है। लेकिन हम खुद जानते हैं कि इन क़िस्सों की याद ताज़ा करने के लिए हमारे आज कल की और आने वाले इतिहास पर क्या असर पड़े हैं और पड़ेंगे।

'ओहद' की जंग के बाद सैय्यदुश्शोहदा हज़रत हमज़ा पर पैग़म्बर (स0) और मुसलमानों के सोग मनाने की बात तारीख़ की बड़ी-बड़ी मशहूर किताबों में लिखी है। रसूल

(स0) अन्सार के एक घर के पास से गुज़र रहे थे। आपने रोने पीटने की आवाज़ सुनी। आप (स0) की आँखें भी बरस पड़ीं और मुबारक चेहरे से आँसू बहने लगे। आप (स0) ने फरमायाः लेकिन हमज़ा पर कोई रोने वाला नहीं है। साद इब्ने माज़ ने जब यह बात सुनी तो वह क़बीला बनी अब्दुल अश्हल के कुछ लोगों के पास गए और उनकी औरतों को हुक्म दिया किः आप (स0) के चचा हज़रत हमज़ा के घर जाओ और सैय्यदुश्शोहदा हमज़ा का सोग मनाओ।(1)

याद रहे कि यह काम हज़रत हमज़ा के साथ ख़ास नहीं है बल्कि बाक़ी सभी शहीदों के मामले में भी इसको बरतना चाहिए। हमें चाहिए कि आज की और आने वाली पीढ़ियों (Generations) के लिए उनकी याद ज़िन्दा रखें और इस तरीक़े से मुसलमानों की रगों में नया ख़ून दौड़ाते रहें। इत्तेफाक़ से आज जबकि मैं यह लाइनें लिख रहा हूँ आशूरा का दिन है। (10 मुहर्रम 1412 हिजरी/1991 ई0)

आज पूरी शीआ दुनिया में सचमुच एक बहुत बड़ा जोश फैला हुआ है। बच्चे, जवान, और बूढ़े सब ही काले कपड़े पहने हुए हैं इमाम हुसैन (अ0) और कर्बला की शहीदों का एक साथ सोग मना रहे हैं। उन सबे के दिलों और दिमाग़ों में ऐसा इंक़िलाब उठा हुआ है कि अगर उन्हें इस्लाम के दुश्मनों से मुक़ाबले के लिए कहा जाए तो सब हथियार उठाकर मैदान में उतर जाएँगे, और किसी तरह की कुर्बानी से पीछे नहीं हटेंगे जैसे सबकी रगों में शहादत का ख़ून दौड़ रहा हो और उस वक़्त और उस घड़ी हज़रत हुसैन (अ0) और

(1) कामिल इब्ने असीर जि-2 पे-163 व सीरत इब्ने हिशाम जि-3 पे-104

उनके साथियों को इस्लाम की कुर्बानी की जगह कर्बला में अपने सामने देख रहे हों।

इन शानदार रसमों में जो जोशीले उमंग भरे शेर पढ़े जाते हैं वह घमण्डी साम्राज्य और पूँजीवाद, (Colonalism और Agression) के ख़िलाफ मुँह तोड़ नारों से भरे पड़े हैं। यह जुल्म के सामने न झुकने और बेइज़्ज़ती की ज़िन्दगी पर इज़्ज़त की मौत को बढ़ावा देने का एलान कर रहे हैं।

हमारा अक़ीदा है कि: यह एक बड़ी रूहानी पूँजी है जिसकी हिफाज़त करना चाहिए और इस्लाम, ईमान और तक़वे के बाक़ी रखने के लिए इससे फाएदा उठाना चाहिए।

73- मुतअ

हमारा अक़ीदा है कि वक़्ती शादी एक शरअी काम है जिसे इस्लामी फिक़ह (धर्मविधि/क़ानून) में ''मुतअ'' कहते हैं। शादी दो क़िस्म की होती है एक तो हमेशा रहने वाली (स्थायी) शादी जिसमें वक़्त तैय नहीं होता और दूसरी मुतअ (अस्थाई/समय से बन्धी) जिसकी मुद्दत (अवधि) दोनों तरफ वालों के एके से तैय होती है।

यह शादी हमेशा की शादी के साथ बहुत से मसलों में एक ही तरह की होती है। जैसे महेर का हक़, औरत का हर तरह की रुकावटों से ख़ाली होना और इस शादी से पैदा होने वाले बच्चे वही हुक्म वाले होंगे जो हमेशा रहने वाली शादी से पैदा होने वाले बच्चे रखते हैं। अलगाव के बाद 'इद्दत' पूरी करने का मसला एक ही है। ये सब चीज़ें हमारे बीच मानी हुई हैं। दूसरे लफ्ज़ों में मुतअ अपनी सभी ख़ास बातों और विशेषताओं के साथ एक तरह की शादी है।

अलबत्ता हमेशा वाला निकाह और मुतअ में कुछ फर्क़ भी है। वह यह कि मुतअ में औरत का ख़र्च शौहर पर वाजिब नहीं है और मियाँ बीवी एक दूसरे की मीरास* के हक़दार नहीं होंगे। (लेकिन इनके बच्चे माँ–बाप और एक दूसरे की मीरास के हक़दार होंगे)।

बहरहाल हमने यह हुक्म कुर्आन मजीद से लिया है जो फरमाता है:

"فَمَا اسْتَمْتَعْتُم بِهِ مِنْهُنَّ فَآتُوهُنَّ أُجُورَهُنَّ فَرِيضَةً."

[**जिन औरतों से तुम मुतअ करते हो उनके मेहर का हक़ तुम्हें अदा करना होगा।**] (सूरा 'निसा' आयत 24)

हदीस और तफसीर के बहुत से मशहूर आलिमों ने सफ़ाई से कहा है कि यह आयत मुतअ के बारे में है।

तफसीरे तबरी में इस आयत के बारे में मुताअ से जुड़ी बहुत सी हदीसें लिखी गई हैं, जिनसे मालूम होता है कि यह आयत मुतअ के बारे में है और पैग़म्बर (स0) के बहुत से सहाबियों ने इस पर गवाही दी है। (तफसीरे तबरी जि–5 पे–9)

तफसीर 'अद्दुररुल मन्सूर' और सु–नने बैहक़ी में भी इस सिलसिले में बहुत सी रिवायतें लिखी गई हैं।[1]

सही बुख़ारी, मुसनद अहमद, सही मुस्लिम और बहुत सी दूसरी किताबों में ऐसी हदीसें मिलती हैं जो नबी (स0) के समय में मुताअ के होने को साबित करती हैं। हालाँकि इसके ख़िलाफ रिवायतें भी मौजूद हैं।[2]

---

*मरने के बाद छोड़ी हुई सम्पत्ति, पैसा जायदाद जो क़रीबी रिश्तेदारों में हक़ के हिसाब से बाँटी जाती है।

(1) अद्दुररुल मन्सूर जि–2 पे–140 और सुनने बैहक़ी जि–7 पे–206

(2) मुसनद अहमद जि–4 पे–436, सही बुख़ारी जि–7 पे–16 और सही मुस्लिम जि–2 पे–1022 (बाब निकाहे मुतअ)



कुछ सुन्नी फक़ीह कहते हैं कि नबी (स0) के ज़माने में मुतअ के निकाह का चलन था। इसके बाद यह हुक्म हट गया। जबकि कुछ यह कहते हैं कि यह हुक्म आप (स0) की ज़िन्दगी के आख़िर तक बाक़ी था और हज़रत उमर (मुसलमानों के दूसरे ख़लीफा) ने यह हुक्म मन्सूख़ कर (उठा) दिया। हज़रत उमर का कहना:

"مُتْعَتَانِ كَانَتَا عَلٰى عَهْدِ رَسُوْلِ اللّٰهِ وَاَنَا مُحَرِّمُهُمَا وَمُعَاقِبٌ عَلَيْهَا: مُتْعَةُ النِّسَاءِ وَمُتْعَةُ الْحَجِّ."

[पैग़म्बर (स0) के ज़माने में दो मुतअ जाएज़ थे और मैं उन्हें हराम ठहराता हूँ और उन पर सज़ा दूँगा। उनमें से एक औरतों से मुतअ और दूसरा मुतअ-ए-हज (हज की एक ख़ास क़िस्म) है।](1)

इस बात में शक नहीं है कि बहुत से दूसरे हुक्मों की तरह इस इस्लामी हुक्म में भी अहलेसुन्नत के रावियों में मतभेद है। कुछ इस बात को मानते हैं कि यह नबी (स0) के ज़माने में ही ख़त्म हो चुका है। कुछ दूसरे ख़लीफा के समय में इसके ख़त्म होने को मानते हैं और कुछ पूरी तरह इसका इन्कार करते हैं। फिक़ह के मसलों में इस तरह का अलगाव, भेद मौजूद है। लेकिन शीआ फक़ीहों में इसके जाएज़ होने पर एक राय है। वे कहते हैं कि यह आप (स0) के ज़माने में ख़त्म नहीं हुआ और आप (स0) के इन्तेक़ाल के बाद ख़त्म नहीं

---

(1) यह हदीस इसी तरह या इसी से मिलते-जुलते लफ़्ज़ों में सु-नने बैहक़ी जि-7 पे-206 और दूसरी बहुत सी किताबों में आई है। "अल-ग़दीर" के लेखक ने 'सही' किताबों और मुसनद से 25 हदीसें लिखी हैं जो यह बताती हैं कि इस्लामी शरीअत में मुतअ हलाल है और पैग़म्बर (स0) पहले ख़लीफा और हज़रत उमर के समय के कुछ हिस्से में यह चलन में रहा है। फिर दूसरे ख़लीफा ने अपनी उम्र की आख़री हिस्से में इस पर रोक लगा दी। (अलग़दीर जि-3 पे-332)

किया जा सकता है।

बहरहाल मेरा अक़ीदा है कि: अगर मुतअ से ग़लत फाएदा न उठाया जाए तो यह उन जवानों के सिलसिले में कुछ समाजी ज़रूरतों को पूरा कर सकता है जो हमेशा वाली शादी नहीं कर सकते, या जो तिजारत, कारोबार, तालीम, शिक्षा, कमाई या दूसरी वजहों से थोड़े समय के लिए अपनी घर वालों से दूर रहते हैं। मुतअ का विरोध इस तरह के लोगों में बुराई का रास्ता खोल देगा। ख़ास कर हमारे ज़माने में जिसमें बहुत सी वजहों से हमेशा वाले निकाह करने की उम्र बढ़ गई है और दूसरी तरफ से सेक्स को उभारने के सामान बहुत ज़्यादा हो चुके हैं। अगर इस रास्ते पर रोक लगा दी जाए तो यक़ीनी तौर पर बुराई का रास्ता खुल जाएगा।

हम यह बात दोबारा दोहराते हैं कि हम इस्लामी हुक्म से हर तरह का ग़लत फाएदा उठाने, उसे सेक्स के ग़ुलाम लोगों के हाथों खिलौना बना देने और औरतों को बुरे काम की तरफ ढकेलने के मुख़ालिफ हैं। लेकिन किसी क़ानून से सेक्स के कुछ ग़ुलाम लोगों के गलत फाएदा उठाने के बहाने खुद इस क़ानून पर रोक नहीं लगना चाहिए बल्कि इसके ग़लत इस्तेमाल पर रोक लगना चाहिए।

74– शीओं का इतिहास

हमारा अक़ीदा है कि: शीआ मत की नींव पैग़म्बर (स0) के दौर में आप (स0) की हदीसों की वजह से पड़ी। इस पर हमारे पास बड़े खुले सुबूत मौजूद हैं।

तफ़सीर के बहुत से लिखने वालों ने इस पाक आयत:

"اِنَّ الَّذِيْنَ آمَنُوْا وَعَمِلُوْاالصَّالِحَاتِ اُولٰئِکَ هُمْ خَيْرُ الْبَرِيَّةِ."

[जो लोग ईमान लाए और नेक काम किये वह (ख़ुदा की) बेहतरीन मख़्लूक़ (पैदा होने वालों में सबसे अच्छे, श्रेष्ठ–उत्तम) हैं।]

(सूरा 'बैय्यिना' आयत 7)

के बारे में पैग़म्बर (स0) की यह हदीस लिखी है कि इससे मुराद हज़रत अली (अ0) और उनके शीआ हैं।

तफ़सीर के मशहूर आलिम सुयूती ने 'दुररुलमन्सूर' में इब्ने असाकिर से और उन्होंने जाबिर बिन अब्दुल्लाह अन्सारी से रिवायत की है कि हम पैग़म्बर (स0) की सेवा में बैठे हुए थे कि अली (अ0) हमारी तरफ आए। जब आप (स0) की नज़र उन पर पड़ी तो आपने फरमायाः

"وَالَّذِیْ نَفْسِیْ بِيَدِهٖ اِنَّ هٰذَا وَشِيْعَتَهُ لَهُمُ الْفَآئِزُوْنَ يَوْمَ الْقِيَامَةِ."

[उस ज़ात की क़सम जिसके हाथों में मेरी जान है बेशक यह और इसके शीआ ही क़यामत के दिन कामियाब हैं।]

इसके बाद यह आयत नाज़िल हुईः

"اِنَّ الَّذِيْنَ آمَنُوْا وَعَمِلُوْاالصَّالِحَاتِ اُولٰئِکَ هُمْ خَيْرُ الْبَرِيَّةِ."

इसके बाद जब हज़रत अली (अ0) सहाबियों के मजमे में आते तो वह यह कहते थेः

"جَاءَ خَيْرُ الْبَرِيَّةِ."

[ख़ुदा की मख़्लूक़ का सबसे बेहतरीन शख़्स आ गया।]

('अद्दुररुल मन्सूर' जि–6 पे–379)

इब्ने अब्बास, अबुबरज़ा, इब्ने मरद्वैय और अतिया औफ़ी से भी यही बात (थोड़े से फ़र्क़ के साथ) मिलती है।

(और जानकारी के लिए पयामे कुर्आन जि-9 पे-259 और इसके बाद के पेज देखें)

यूँ हम देखते हैं कि अली (अ0) से मुहब्बत रखने वालों के लिए लफ्ज़ ''शीआ'' का चुनाव नबी (स0) के ज़माने में ही हो गया था। यह नाम उन्हें रसूल (स0) ने दिया है। ऐसा नहीं है कि ख़िलाफ़त के ज़माने में या सम्राटों के ज़माने में उन्हें यह नाम मिला हो।

यूँ तो हम दूसरे इस्लामी फ़िरक़ों का एहतेराम करते हैं और उनके साथ एक ही सफ़ (लाइन) में खड़े होकर जमात के साथ नमाज़ अदा करते हैं और एक ही जगह पर एक ही वक़्त में हज अदा करते हैं और इस्लाम के मिलेजुले मक़सदों के लिए मदद करते हैं, लेकिन इसके बाद भी हमारा अक़ीदा है कि अली (अ0) के मानने वाले कुछ ख़ास अच्छाइयों वाले होते हैं। उन पर नबी (स0) का ख़ास ध्यान था और आप (स0) की मेहरबानी की नज़र थी। इसलिए हम ने इस मत पर चलना अपनाया है।

शीओं के कुछ मुख़ालिफ़ इस बात की कोशिश करते हैं कि शीआ मज़हब और अब्दुल्लाह इब्ने सबा के बीच ताल्लुक़ (सम्बन्ध) की कड़ियाँ मिलाएँ। वह हमेशा यह बात दोहराते हैं कि शीआ अब्दुल्लाह इब्ने सबा के पीछे चलने वाले हैं जो सच में यहूदी था और बाद में इस्लाम लाया था। यह बात बहुत ही अजीब है क्योंकि शीओं की सभी किताबों को देखने के बाद यह नज़र आता है कि इस मज़हब के मानने वाले लोग इस शख़्स से तनिक बराबर भी लगाव नहीं रखते। इसके उलटे



शीओं की सभी रिजाली किताबों में अब्दुल्लाह इब्ने सबा को एक भटका, बहका और फिरा हुआ आदमी ठहराया गया है। हमारी कुछ रिवायतों के मुताबिक़ हज़रत अली (अ0) ने इसके मुरतद होने की वजह से इसके क़त्ल का हुक्म जारी कर दिया था।[1]

इसके अलावा इतिहास में अब्दुल्लाह इब्ने सबा का होना ही शक वाला है। कुछ तहक़ीक़ (शोध) करने वालों की यह राय है कि अब्दुल्लाह इब्ने सबा एक फ़र्ज़ी और कहानी का चरित्र है और इस नाम का कोई आदमी सच में मौजूद नहीं था न कि वह शीआ मज़हब का बानी (संस्थापक) हो।[2] अगर हम इसको एक फ़र्ज़ी इंसान भी मान लें तब भी हमारी नज़र में वह एक गुमराह और फिरा हुआ चरित्र था।

75– शीईयत के मरकज़

यह बात अहम है शीओं का मरकज़ (केन्द्र/Centre) हमेशा ईरान नहीं रहा बल्कि इस्लाम शुरु की सदियों में ही इसके कई मरकज़ थे जिनमें कूफ़ा, यमन बल्कि खुद मदीना भी शामिल हैं। शाम में बनी उमैय्या के ज़हरीले प्रोपेगण्डों के बाद भी शीओं के बहुत से मरकज़ मौजूद थे, हालांकि उनका फैलाव इराक़ में मौजूद शीआ मरकज़ों के बराबर न था।

मिस्र की बड़ी सरज़मीन में भी हमेशा शीओं की बहुत सी जमातें आती रहती हैं। यहाँ तक कि फातमी ख़लीफाओं

---

(1) "तन्क़ीहुल मक़ाल फी इल्मिर रिजाल" (अब्दुल्लाह इब्ने सबा के बयान में) और इल्मे रिजाल में शीओं की दूसरी मशहूर किताबों को देखें।

(2) किताब अब्दुल्लाह इब्ने सबा, लेखक अल्लामा मुर्तज़ा असकरी।

के ज़माने में तो मिस्र की हुकूमत भी शीओं के हाथ में थी।[1]

अब भी दुनिया के बहुत से देशों में शीआ मुसलमान मौजूद हैं। जैसे सऊदी अरब के पूर्वी इलाक़े में बहुत बड़ी संख्या में शीआ हैं और दसूरे इस्लामी फ़िरक़ों से इनके अच्छे ताल्लुक़ात (सम्बन्ध) हैं। इस्लाम के दुश्मनों की हमेशा से यह कोशिश रही है कि शीआ मुसलमानों और दूसरे मुसलमानों के बीच दुश्मनी, बैर, मनमुटाव, बुरी नीयत और नासमझियों के बीज बोएँ, उनके बीच अलगाव, लड़ाई और झगड़ों की आग भड़काएँ और दोनों को कमज़ोर करते चले जाएँ।

ख़ास तौर से आज जबकि इस्लाम, माद्दियत (Materialism) का झण्डा उठाय पूरबी और पच्छिमी ताक़तों (शक्तियों/Powers) के मुक़ाबले में दुनिया पर छा जाने वाली

---

(1) बनी उमैया के ज़माने में शाम के शीआ भयानक दबाव में थे। बनी अब्बास के काल में उन्हें आराम नसीब नहीं हुआ। यहाँ तक कि उनमें से बहुत से लोग बनी उमैया और बनी अब्बास की क़ैद में चल बसे। कुछ लोग पूरब की तरफ़ चले गये और कुछ पच्छिम की तरफ़। इदरीस बिन अब्दुल्लाह बिन हसन मिस्र चले गये और वहाँ से मराकश (Moracco) चले गये। मराकश के शीओं की मदद से उन्होंने इदरीसी राज की नींव रखी जो दूसरी सदी हिजरी के आख़िर से लेकर चौथी सदी हिजरी के आख़िर तक बना रहा और मिस्र में शीओं की एक और हुकूमत बनी। ये लोग अपने आपको इमामे हुसैन (अ0) और पैग़म्बरे इस्लाम (स0) की बेटी हज़रत फ़ातिमा (स0) की औलाद कहते थे। मिस्र के लोगों में एक शीआ हुकूमत बनाने का झुकाव देखकर उन्होंने यह काम किया। चौथी सदी हिजरी से बाक़ाएदा तौर पर यह हुकूमत बनी। उन्होंने शहर "क़ाहिरा" की बुनियाद रखी। फ़ातिमी ख़लीफ़ाओं की कुल गिनती चौदह (14) है। उनमें से दस ख़लीफ़ा की राजधानी मिस्र था। क़रीब-क़रीब तीन सदियों तक उन्होंने मिस्र और अफ़्रीक़ा के दूसरे हिस्सों पर हुकूमत की। मस्जिद जाम-ए-अज़हर और अलअज़हर युनिवर्सिटी उन्होंने बनाई। फ़ातमियों को नाम फ़ातिमा ज़हरा की औलाद होने की वजह से पड़ा है। (देखिये दाएरतुल मआरिफ़, दहख़ुदा, दाएरुल मआरिफ़ फ़रीद वजदी, अलमुन्जिद फ़िल अअ्लाम, लफ़्ज़ "फ़त्म" व "ज़हर")।



ताक़त बनकर उभर रहा है और दुनिया के लोगों को जो माद्दी तहज़ीबों (Cultures) से निराश हो गये अपनी तरफ ध्यान खींच रहा है, इस्लाम के दुश्मनों की उम्मीदों का सबसे बड़ा सहारा यह है कि मुसलमानों की ताक़त कमज़ोर करने और दुनिया में इस्लाम के तेज़ी से बढ़ते हुए असर को रोकने के लिए मज़हबी अलगाव, भेद फैलाएँ और मुसलमानों को आपस में उलझा दें। बेशक अगर सभी इस्लामी फिरक़ों के मानने वाले जागते और होशियार रहें तो इस ख़तरनाक साज़िश को ख़तम कर सकते हैं।

यह बात बताने वाली है कि अहलेसुन्नत की तरह शीओं के भी कई फिरक़े हैं। लेकिन सबसे मशहूर और जाना–पहचाना शीआ इस्ना अशरी हैं जिनकी गिनती दुनिया के शीओं में सबसे ज़्यादा है। हालाँकि शीओं की सही गिनती (जनगणना) और दुनिया के मुसलमानों में उनका अनुपात (Proportion) साफ नहीं है लेकिन एक अन्दाज़े से उनकी संख्या बीस से लेकर तीस करोड़ के लगभग है जो दुनिया की मुस्लिम आबादी का लगभग चौथाई हिस्सा है।

76– अहलेबैत की मीरास (धरोहर)

इस मत के मानने वालों ने अहलेबैत के इमामों के ज़रिए पैग़म्बर (स0) की बहुत सी हदीसें ली हैं और हज़रत अली (अ0) और दूसरे इमामों से भी बहुत ज़्यादा रिवायतें ली हैं। यही आज शीओं तालीम, शिक्षाओं और फिक़ह के बुनियादी स्रोतों में से हैं। इन हदीसों वाली किताबों में चार किताबें मशहूर है:

1– उसूल काफी

2– तहज़ीबुल इस्लाम

3– मन ला यह्ज़रुहुल फ़क़ीह 4– इस्तेबसार

लेकिन इस बात को दोहराना ज़रूरी है कि इन मशहूर Reference की किताब या दूसरे एतेबार (भरोसे) वाली किताब में किसी हदीस के होने का यह मतलब नहीं है कि वह हदीस अपनी जगह सही हो। बल्कि हर हदीस की सनद का एक सिलसिला (प्रमाण–क्रम) है। सनद में बयान हर रिवायत करने वाले का जाएज़ा रिजाल की किताबों की रौशनी में लिया जाता है। अगर सनद के सभी लोग भरोसे वाले साबित हों तो वह हदीस एक सही हदीस की हैसियत से जानी जाएगी। अगर ऐसा न हुआ तो वह हदीस मशकूक (शक वाली) या ज़ईफ (ढीली) कहलाएगी। यह काम सिर्फ हदीस और रिजाल के जानकार आलिमों के बस की बात है।

(मुक़द्दमा सही मुस्लिम और फत्हुल बारी फी शरहि सहीहुल बुख़ारी देखें।)

इस से यह बात अच्छी तरह साफ हो जाती है कि शीओं की किताबों में हदीसों के जमा करने का तरीक़ा अहलेसुन्नत की जानी मानी किताबों से अलग है। क्योंकि मशहूर 'सहीह' किताबों ख़ास कर सही बुख़ारी और सही मुस्लिम में उनके लेखकों का तरीक़ा यही रहा है कि वह ऐसी हदीसें जमा करें जो उनके नज़दीक सही और भरोसे वाली हो। इसी वजह से अहलेसुन्नत के अक़ीदे तक पहुँचने के लिए उनमें लिखी हुई हदीसों पर भरोसा किया जा सकता है।[1] जबकि शीआ हदीस जमा करने वालों का अन्दाज़ यह रहा है कि अहलेबैत (अ0) से मन्सूब सभी हदीसें जमा कर दी जाएँ फिर सही और ग़ैर सही हदीसों की पहचान का काम 'रिजाल' के विद्वानों के हवाले कर दिया जाए। (ग़ौर कीजिये)

77– दो बड़ी किताबें

शीओं के अहम स्रोत (जो उनकी बड़ी अहम मीरास का एक हिस्सा माने जाते हैं) में से एक नह्जुलबलागा है जिसमें लगभग एक हज़ार साल पहले शरीफ रज़ी मरहूम ने तीन हिस्सों में हज़रत अली (अ0) के खुतबे (प्रवचन), ख़त और मुख़्तसर कथन/बातें जमा किये थे। इस किताब के विषय इतने ऊँचे और लफ़्ज़, शब्द इतने ख़ूबसूरत हैं कि किसी भी मज़हब का मानने वाला जब इस किताब को पढ़ता है तो इसके ऊँचे मतलब और विचार से असर ले लेता है। ऐ काश न सिर्फ मुसलमान बल्कि ग़ैर मुस्लिम भी इसे पहचानते होते ताकि वे तौहीद, जन्म, जन्मदाता और क़यामत के अलावा चाल–चलन, राजनीति और समाज से जुड़े मसलों के बारे में इस्लाम की ऊँची तालीमों/शिक्षाओं से जानकार होते।

इस बड़ी महान मीरास में से एक और बड़ी अहम 'सहीफए–सज्जादिया, है जो बेहतरीन, बहुत उमदा और बहुत ही ख़ूबसूरत शैली की दुआओं का एक मजमूआ (संग्रह) है जो बड़े गहरे और ऊँचे माने रखती हैं। हक़ीक़त में यह किताब नह्जुलबलाग़ा वाला काम एक दूसरी तरह कर रही है। इसके एक–एक जुमले में इंसान के लिए एक नया सबक़ छुपा हुआ है। हक़ीक़त में यह किताब खुदा के दरबार में हर इंसान को दुआ और मुनाजात करने का तरीक़ा सिखाती है और इंसान की रूह और दिल को उजियाली और पाकी देती है।

जैसा कि इस किताब के नाम से साफ है कि इस किताब में शीओं के चौथे इमाम हज़रत ज़ैनुल आबिदीन अली इब्ने हुसैन (अ0) जिनका लक़ब (उपनाम) सज्जाद है उनकी

दुआओं को जमा किया गया है। जब भी हम अपने अन्दर दुआ की रूह, ख़ुदा की तरफ़ ज़्याद ध्यान, लगन और उसकी पाक ज़ात से इश्क़, प्रेम पैदा करना चाहते हैं तो यह दुआएँ पढ़ते हैं, बसन्ती घटाओं की तरह इस किताब से सैराब होते हैं।

शीआ हदीसें जो लाखों हैं का बहुत सा हिस्सा पाँचवें इमाम और छठे इमाम यानी मुहम्मद बाक़िर (अ0) और हज़रत जाफर सादिक़ (अ0) से ली हुई हदीसें हैं। बहुत सी हदीसें आठवें इमाम हज़रत अली रिज़ा (अ0) से भी मिली हुई हैं। इसकी वजह यह है कि इन तीन बड़ी हस्तियों को वक़्त और जगह से ऐसा माहौल और मौक़ा मिला जिसमें इन पर दुश्मनों और उमवी व अब्बासी सम्राटों का दबाव कम था। इसी वजह से उन्होंने रसूल (स0) की बहुत सारी हदीसों जो उन तक उनके बाप-दादा से पहुँची थीं बताने में कामियाब हो गए। यह हदीसें इस्लामी फिक़ह के सारे बाबों यानि विषयों से जुड़ी हुई हैं। शीआ मज़हब को 'जाफरी' मज़हब कहने की वजह भी यही है कि इसकी बहुत सी रिवायतें छठे इमाम हज़रत जाफर सादिक़ (अ0) से रिवायत हैं। इमाम सादिक़ (अ0) के समय में बनी उमैय्या की हुकूमत कमज़ोर हो चुकी थी और बनी अब्बास को इन लोगों पर दबाव डालने की ताक़त उस वक़्त तक नहीं मिल पाई थी।

हमारी किताबों के बारे में मशहूर है कि इन इमाम ने हदीस, ज्ञान, फिक़ह के मैदानों में चार हज़ार शार्गिदों को ट्रेनिन्ग (Training) दी। हनफी मज़हब के मशहूर इमाम अबुहनीफा ने एक छोटे से जुमले में इमाम जाफर सादिक़ (अ0) की पहचान इस तरह बताई है:

"مَا رَأَيْتُ اَفْقَهَ مِنْ جَعْفَرِ بْنِ مُحَمَّدٍ."

[मैंने जाफर बिन मुहम्मद से बड़ा फक़ीह (धर्म को समझने वाला) नहीं देखा।][1]

अहलेसुन्नत के एक और इमाम मालिक बिन अनस ने कहा: मैं कुछ ज़माने तक जाफर बिन मुहम्मद के पास आता जाता रहा। मैंने उन्हें हमेशा इन तीन हालतों में से किसी एक में पाया: या नमाज़ की हालत में या रोज़े की हालत में या कुर्आन पाक की तिलावत (पाठ) करते हुए।

मेरे अक़ीदे से इल्म, ज्ञान व इबादतों में किसी ने जा़फर सादिक़ (अ0) से बढ़कर किसी को भी न देखा और न सुना है।[2] चूँकि इस किताब में बहुत ही कम में इख़्तेसार के साथ मतलब का बयान करना है इसलिए अहलेबैत के इमामों की शान में दूसरे इस्लामी उलमा के कमेन्ट (Comments) और राय की चर्चा नहीं करते।

78– इस्लामी इल्मों (शास्त्रों) में शीओं का रोल

हमारा अक़ीदा है कि इस्लामी इल्मों को जन्म देने और बढ़ने बढ़ाने में शीओं का बड़ा अहम रोल रहा है। कुछ लोगों का मानना है कि शीआ इस्लामी इल्मों का झरना हैं। यहाँ तक कि इस सिलसिले में किताब या किताबें लिखी गई हैं और सुबूत सामने लाये हैं। लेकिन हम कहते हैं कि कम से कम उन इल्मों को जन्म देने में इनका बड़ा हिस्सा है। इस बात की सबसे बड़ी दलील वह किताबें हैं जो शीआ आलिमों ने

---

(1) 'तज़किर: अलहुफ्फाज़' ज़हबी, जि–1 पे–166

(2) तह्ज़ीबुत तह्ज़ीब जि–2 पे–104

किताब अलइमामुस्सादिक़ जि–1 पे–53 में असद हैदर के बक़ौल)।

अलग-अलग इस्लामी इल्मों और कलाओं (Arts) के बारे में लिखी हैं। फिक़ह और उसूले फिक़ह में हज़ारों किताबें लिखी गई हैं। इनमें कुछ बहुत ज़्यादा तफसील (विस्तार) के साथ और बेमिसाल हैं। तफसीर और कुर्आनी इल्मों में हज़ारों किताबें, अक़ीदों और 'इल्मे कलाम' में हज़ारों किताबें और दूसरे इल्मों, शास्त्रों में हज़ारों हज़ार किताबें शीओं ने लिखी हैं। इनमें से बहुत सी किताबें अब भी हमारी लाइब्रेरियों और दुनिया की मशहूर लाइब्रेरियों में मौजूद हैं और सब लोगों के सामने हैं। हर कोई इन लाइब्रेरियों में जाकर इस दावे की सच्चाई को परख सकता है।

एक मशहूर शीआ आलिमे दीन ने इन किताबों की फेहरिस्त (सूची) तैयार की है और 26 बड़ी-बड़ी जिल्दों में इनका ज़िक्र किया है।[1]

यह फेहरिस्त दसियों साल पहले तैयार हुई। आख़री दहाइयों में एक तरफ से पिछले शीआ आलिमों के कामों को ज़िन्दा करने और उनकी हाथ की लिखी और छपी हुई किताबों को जमा करने की बड़ी कोशिश हुई हैं। दूसरी तरफ से नई किताबों में लिखने (रचना और संकलन) के बारे में यक़ीन से कहा जा सकता है कि सैकड़ों या हज़ारों नई किताबें छापी जा चुकी हैं। यूँ इन किताबों के बारे में हमने कोई फेहरिस्त तैयार नहीं की है।

---

(1) इस किताब का नाम अज़्ज़रीआ इला तसानीफिश्शीआ है। इसके लेखक तफ़सीर और हदीस के मशहूर आलिम शैख़ आक़ा बुज़ुर्ग तेहरानी हैं। इस फेहरिस्त में जिन किताबों का बयान उनके लेखकों के नाम पते और उनके हालात के साथ हुआ है उनकी तादाद 68 हज़ार जिल्दें हैं। यह किताब बहुत पहले छप कर लोगों के सामने आ चुकी है।

79– सच सच्चाई, और ईमानदारी– इस्लाम के अहम रुकन (आधार)

हमारा अक़ीदा है कि सच सच्चाई, और ईमानदारी इस्लाम के अहम और बुनियादी आधार में से हैं। कुर्आन मजीद इरशाद फरमाता है:

"قَالَ اللّٰهُ هٰذَا يَوْمُ يَنْفَعُ الصّٰادِقِيْنَ صِدْقُهُمْ."

[खुदा फरमाता है आज वह दिन है कि जिस दिन सच्चों की सच्चाई उन्हें फाएदा पहुँचाएगी।] (सूरा 'माएदा' आयत 119)

बल्कि कुर्आन की कुछ आयतों से मालूम होता है कि क़यामत के दिन हक़ीक़ी इनाम वह है जो इंसान को सच और सच्चाई (ईमान, खुदा के साथ किय गए वादों पर अमल और ज़िन्दगी के सभी मैदानों में सच और सच्चाई) के बदले में दिया जाएगा।

"لِيَجْزِىَ اللّٰهُ الصّٰادِقِيْنَ بِصِدْقِهِمْ."

(सूरा 'अह्ज़ाब' आयत 24)

जैसा कि पहले भी इशारा किया जा चुका है कुर्आन के हुक्म के लिहाज़ से हम सब मुसलमानों की यह ज़िम्मेवारी है कि हम ज़िन्दगी भर मासूमों और सच्चों के साथ रहें और उनके साथ चलें।

"يٰاَيُّهَا الَّذِيْنَ آمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ وَكُوْنُوا مَعَ الصّٰادِقِيْنَ."

(सूर: तौबा आयत 119)

इस बात की अहमियत की वजह से ही खुदा ने अपने पैग़म्बरों को यह हुक्म दिया है कि वह खुदा से हर काम को सच्चाई के साथ शुरू करने और सच्चाई के साथ इसको पूरा

करने की तौफीक़ (ख़ुदा की ऊपरी मदद) माँगे।

"وَقُلْ رَّبِّ اَدْخِلْنِيْ مُدْخَلَ صِدْقٍ وَّاَخْرِجْنِيْ مُخْرَجَ صِدْقٍ."

(सूरा 'बनी इस्राईल' आयत 80)

इसी बुनियाद पर हम हदीसों में देखते हैं कि ख़ुदा की तरफ से कोई नबी नहीं भेजा गया मगर यह कि उसके बुनियादी तरीक़े में सच, सच्चाई और अमानतदारी शामिल थीं।

"اِنَّ اللّٰهَ عَزَّوَجَلَّ لَمْ يَبْعَثْ نَبِيًّا اِلَّا بِصِدْقِ الْحَدِيْثِ وَاَدَاءِ الْاَمَانَةِ اِلَى الْبِرِّ وَالْفَاجِرِ."(1)

हमने भी इन आयतों और रिवायतों की रौशनी में अपनी पूरी कोशिश इस बात पर लगाई है कि इस किताब की चर्चा में सिर्फ और सिर्फ सच व सच्चाई का रास्ता अपनाएँ और कोई ऐसी बात न करें जो हक़ीक़त और अमानतदारी, ईमानदारी के ख़िलाफ हो। उम्मीद है कि ख़ुदा की मेहरबानी से हम इस ज़िम्मेदारी को पूरा करने में ख़ुदा की तौफीक़ हांसिल कर चुके होंगे। اِنَّهٗ وَلِيُّ التَّوْفِيْق.

80– आख़िर में

इस किताब में बताई गई बातें इस्लाम के उसूल व फ़ुरूअ के बारे में अहलेबैत के मानने वालों और शीओं के अक़ीदों का निचोड़ है। यह किसी कमी ज़्यादती और फेरबदल के बिना बयान हुई हैं। क़ुर्आनी आयतें, इस्लामी रिवायतें और

---

(1)बिहारुल अनवार में यह हदीस हज़रत इमाम जाफर सादिक़ से रिवायत है। (देखिये जि–68 पे–2 और जि–2 पे–104)

इस्लाम के आलिमों की कई किताबों से इनका सुबूत थोड़े में दिया गया है। हालांकि चर्चा के संक्षेप और सारांश को देखते हुए सभी सबूतों और दलीलों को जमा नहीं किया जा सकता था। इस किताब में हमारा मक़सद भी निचोड़ के तौर पर कम शब्दों में मतलब को बयान करना था।

हमारा अक़ीदा है कि यह किताब नीचे दिये गये नतीजों वाली है:-

1- छोटी होने साथ-साथ यह शीआ अक़ीदों को खुले और असर वाले अन्दाज़ में बयान करती है।

सभी इस्लामी फिरकें यहाँ तक कि गैर मुस्लिम भी इस पुस्तिका को पढ़कर के शीआ मज़हब के मानने वालों के अक़ीदों से सीधी तरह से संक्षिप्त तौर पर जानकार हो सकते हैं। इस किताब की तैयारी में बहुत ज़्यादा तकलीफ उठाई गई है।

2- हमारा मानना है कि यह किताब उन लोगों के लिए पूरी-पूरी दलील हो सकती है जो समझे और जाने बिना हमारे अक़ीदों के बारे में फैसला करते हैं और शक वाले और अपने फाएदे के गुलाम लोगों या बे एतेबार किताबों से हमारे अक़ीदे लेते हैं।

3- हमारा मानना है कि ऊपर बयान किये गए अक़ीदों की रौशनी में इस फिरकें को मानने वालों और दूसरे इस्लामी फिरक़ों में इतनी बड़ी दूरी या मतभेद नहीं है जो इस फिरक़े और दूसरे इस्लामी फिरक़ों के बीच मेलजोल और एक-दूसरे की मदद करने में रुकावट बने, क्योंकि सभी इस्लामी फिरक़ों के बीच मिली-जुली (संयुक्त) बातें बहुत ज़्यादा हैं और सबके दुश्मन भी एक ही हैं जिनका उनको सामना है।

4– हमारा अक़ीदा है कि इस्लामी फ़िरक़ों के अलगाव को हवा देने और उनके बीच और ख़ून ख़राबे की आग भड़काने के लिए छुपे हुए हाथ काम कर रहे हैं। वे चाहते हैं कि इस्लाम (जो इस ज़माने के बड़े हिस्सों पर छाता जा रहा है और कम्युनिज़म की बर्बादी से पैदा होने वाली खाई को भरने वाला है और पूँजीवाद की दिनबदिन बढ़ती हुई न हल होने वाली मुश्किलों को हल करने वाला है) को कमज़ोर करें।

मुसलमानों को चाहिए कि वे अपने दुश्मनों को इस बात की इजाज़त न दें कि वे इस चाल में कामियाब हो और यह क़ीमती मौक़ा हाथ से न निकल जाए जो दुनिया में इस्लाम की पहचान कराने के लिए उनके हाथ आया है।

5– हमारा मानना है कि अगर इस्लामी फ़िरक़ों के उलमा एक हो जाएँ और मुहब्बत व सच्चाई से भरे माहोल में हर तरह की सम्प्रदायिक्ता, दिल के मैल, फ़िरक़ापरस्ती और हटधरमी को किनारे रखकर अलग करने वाले मसलों पर चर्चा व बातचीत करें तो ये इख़्तेलाफ़/मतभेद कम हो सकते हैं। हम यह नहीं कहते कि सारे इख़्तेलाफ़ ख़त्म हो जाएँगे बल्कि यह कहते हैं कि इख़्तेलाफ़ में कमी आएगी। जिस तरह कुछ पहले ईरान के कुछ शीआ और सुन्नी उलमा ज़ाहिदान नामी शहर में कई बार मिल बैठे और कुछ इख़्तेलाफ़ों को ख़त्म कर दिया। इसकी तफसील इस छोटी सी किताब में नहीं समा सकती।[1]

आख़िर में हम ख़ुदा तआला की बारगाह में दुआ के लिए हाथ उठाते हैं और अर्ज़ करते हैं:

”رَبَّنَا اغْفِرْلَنَا وَلِاِخْوَانِنَا الَّذِيْنَ سَبَقُوْنَا بِالْاِيْمَانِ وَلَا تَجْعَلْ
فِيْ قُلُوْبِنَا غِلًّا لِّلَّذِيْنَ آمَنُوْا رَبَّنَا اِنَّكَ رَؤُفٌ رَّحِيْمٌ.“

[ऐ हमारे पालने वाले हमें माफ कर दे और हमारे उन भाईयों को भी जो ईमान में हमसे आगे रहे और हमारे दिलों पर ईमान वालों के लिए किसी तरह की कड़वाहट न रहे। ऐ हमारे पालनहार बेशक तू बड़ा मेहरबान और बड़ा रहम करने वाला है।] (सूरा 'हश्र' आयत 10)



(1) इसकी तफसील "पयाम हौज़-ए-इल्मिया कुम" नामी रिसाले में देखी जा सकती है।